सूर्य पुत्र

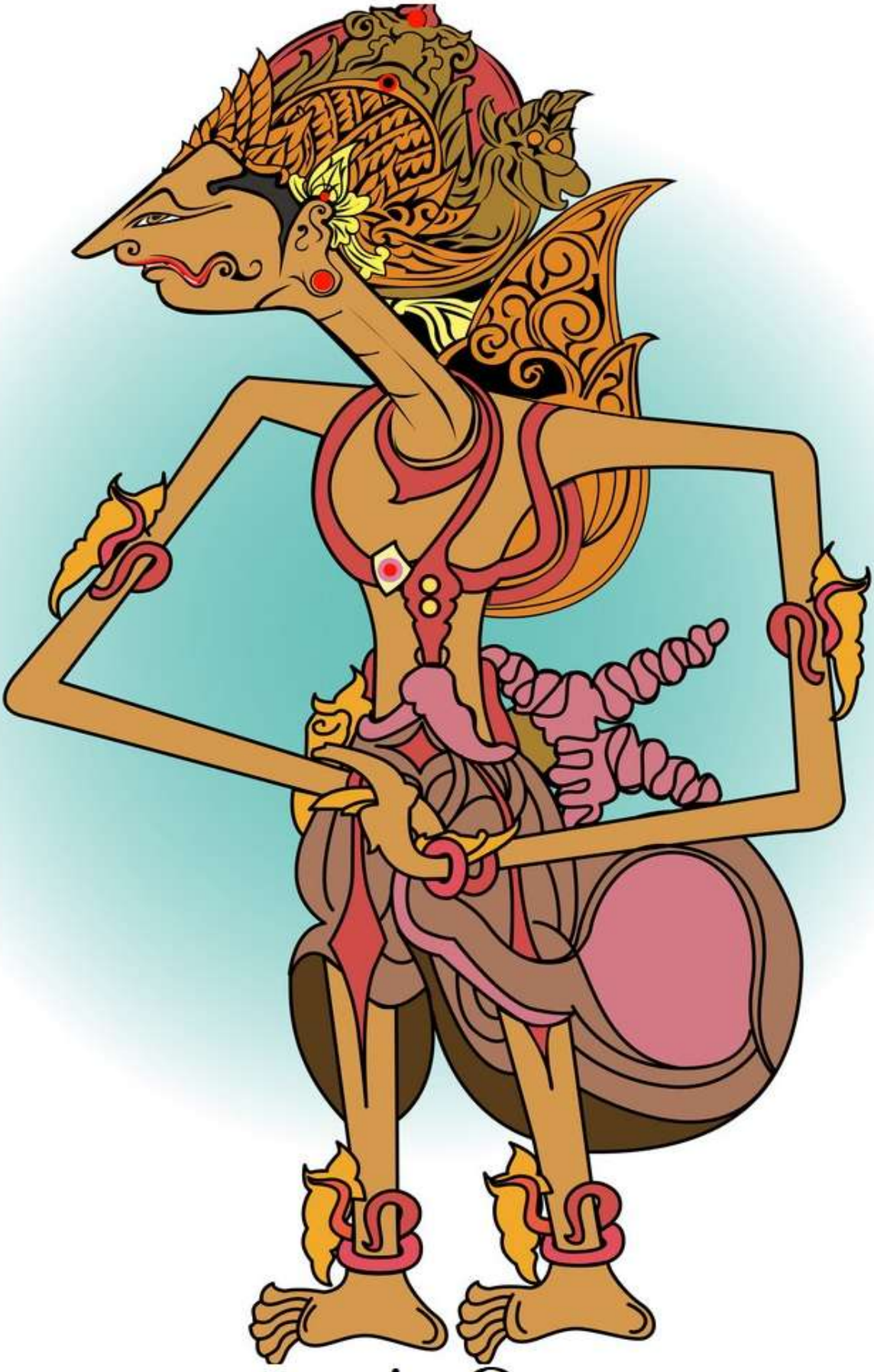

रघुवंश मिश्रा

सूर्यपुत्र

लेखक - रघुवंश मिश्रा

आलोक प्रकाशन

C- 2018 – रघुवंश मिश्रा

प्रस्तावना - आसान राह

प्रिय सी.एस.सी. बंधु,

शिक्षा विभाग में आपका पद बहुत महत्वपूर्ण है. यह केवल मानने की ही बात नही अपितु दिखता भी हैं. अकादिमक व्यवस्थाओ का केन्द्र होने के कारण संकुल केन्द्र की सारी गतिविधियां आपके इर्द गिर्द ही घूमती हैं. आए दिन हम प्रिंट इलेक्ट्रानिक व सोशल मिडिया के व्दारा किसी न किसी शाला, शिक्षक, बच्चे व समुदाय के व्दारा विभिन्न क्षेत्रो में किए गए उल्लेखनीय कार्यो व प्रेरणास्पद कार्यो से परिचित होते हैं और इसका पूरा श्रेय संकुल समन्वयको को जाता हैं क्योंकि केन्द्र बिन्दु होने के कारण सारी गतिविधीयां आपके चारो ओर ही घूमती हैं. इसलिए सार रुप में कहा जा सकता है कि जैसा संकुल समन्वयक वैसा संकुल का स्तर.

अब प्रश्न यह उत्पन्न होता हैं कि सर्वगुण सम्पन्न होने के बावजूद अधिकांश संकुल समन्वयक केन्द्र बिन्दु क्यो नही बन पाते ? इसका सीधा कारण मन का भ्रमित होना हैं. मन में यह भ्रम कुछ हमारी आंतरिक प्रवृत्ति और कुछ बाह्य कारको से उत्पन्न होता हैं. आप अपनी आंतरिक प्रवृत्ति को जितना जानेंगें और समझेंगें उतना ही भ्रम का निवारण होगा और इसका एक मात्र रास्ता सही और गलत का स्पष्ट निर्धारण हैं. जिस दिन से कदम सही रास्ते की ओर बढ़ने लगेगा उसी दिन से केन्द्र बिन्दु बनने की प्रक्रिया भी आरंभ हो जाएगी.

दोस्तो मैंने अपनी इस पुस्तक के माध्यम से एक ऐसे ही संकुल समन्वयक की भ्रमित मन और उसका उनके जीवन पर पड़ रहे प्रभाव को आप लोगो के सामने लाने का प्रयास किया हैं.

आशा हैं यह पुस्तक आप सभी को पसंद आएगी.

धन्यवाद

रघुवंश मिश्रा
उच्च वर्ग शिक्षक
टेंगनमाड़ा

सूर्य पुत्र

विषय - प्रवेश

हां, हां, हां मैं सूर्य पुत्र है. सुना आप सभी ने. आप लोग मुझ पर जितनी बार हसेंगे मैं छाती ठोंककर बार-बार यही कहूंगा कि हां मैं सूर्यपुत्र हूंए सूर्यपुत्र था और सूर्य पुत्र रहूंगा. इसके बाद भी कोई और कुछ सुनना चाहता है तो सामने आ जाये.

अपने पति रामनारायण मिश्रा की नींद में कही गई इन बातों से बगल में सोई रमा की नींद खुल गई. उसे इन शब्दों को सुनकर बिल्कुल भी आश्चर्य नहीं हुआ क्योंकि वह पिछले नौ दिनों से अपने पति को इन्हीं पंक्तियों को बड़बड़ाते हुये देखी और सुनी थी. आश्चर्य तो उसे पहले दिन हुआ था पर यह सोचकर कुछ नहीं बोली की कभी-कभी हर इंसान के साथ ऐसा हो जाता है. वह यह भी जानती और समझती थी कि जब कोई बात हमारे चेतन और अवचेतन मन में साथ साथ अति प्रभावी रूप में प्रवेश कर लें तो वह स्वप्न के साथ स्पष्ट आवाज के रूप में भी अभिव्यक्त होने लगता है और यही सब कुछ उसके पति के साथ हो रहा था.

पर आज रमा से रहा नहीं गया और इसका कारण यह नहीं था कि वह इन पंक्तियों को रोज-रोज सुनकर उब गई थी या उसे इस बात की आशंका हो गई थी कि उसके पति पर किसी भूत-प्रेत का साया पड़ चुका था बल्कि उसे इस बात की चिंता होने लगी थी कि कही उसका पति कोई गंभीर बीमारी का शिकार तो नहीं हो रहा है. मन में उत्पन्न इन्हीं आशंकाओं से मुक्ति के लिये उसने सोची की नहीं अब और नहीं. अब तो मैं इन्हें झकझोर कर उठाऊंगी और उठाकर पुछूंगी ही कि पिछले नौ रातों से आप ये सूर्यपुत्र, सूर्यपुत्र कहकर क्या बड़बड़ाते रहते हैं.

मन में इन्हीं विचारों को लिये रमा अपने पति की ओर देखते हुये प्रतीक्षा करने लगी. कुछ ही पल बाद उसकी प्रतीक्षा की घड़ी खत्म हुई और मिश्रा जी पुनः बड़बड़ाना शुरू किया. हां, हां मैं सूर्यपुत्र हूं..... और इससे पहले कि मिश्राजी का बड़बड़ाना पूरी तरह बंद होता रमा ने उसके पूरे शरीर को हिलाकर झकझोर दिया. मिश्राजी के तन और मन दोनों को इस अप्रत्याशित घटना की रत्ती भर की संभावना नहीं थी. और इस अप्रत्याशित घटना से मिश्राजी चैंककर अपने बिस्तर पर उठ बैठा और आंखे खोलते हुये जल्दी से बोला ऊं..... क्या हुआ रमा.

अपने पति को और आगे बोलने का कुछ भी मौका दिये बिना रमा बोली. अरे यही तो पिछले नौ रातों से मेरे भी मन में जानने की ईच्छा हो रही है कि आपके साथ यह क्या हो रहा है. अपनी पत्नी की बातों को सुनकर अनजान बनते हुये मिश्राजी ने उल्टा उससे ही पूछ लिया. क्यों मेरे साथ कुछ हो रहा है क्या और हो रहा है तो क्या हो रहा है.

मिश्राजी की बातों ने रमा को अंदर से चिढ़ा दी और अपने बिस्तर पर सोये सोये ही बोली. बड़े अजीब आदमी हो. पूरे खेल तमाशा आप करो और उल्टा मुझसे पूछो कि मेरे साथ क्या हो रहा है. पिछले नौ रातों से जैसे ही तीन और चार बजे के बीच का समय होता है अपना गाना शुरू कर देते हो. मिश्रा जी अब तक पूर्ण जागृत अवस्था में आ गया था. उसे इस बात का भी अंदाज हो गया था कि रमा उससे किस विषय पर चर्चा कर रही है. फिर भी मजाक करते हुये बोला. अच्छा गाना गा रहा था, रफी का या मुकेश का और कौन से फिल्म का. तुम भी तो रफी और मुकेश साहब के ही गाने पसंद करती हो. मुझे बिना उठाये चुपचाप गाने का मजा लेती.

गहरी नींद के उस पहर में रमा को मिश्राजी का यह मजाक बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगा और रमा की नाराजगी उसके शब्दों से बाहर आने लगी. एक तो पिछले नौ रातों से नींद आने के समय ही अपने उल-जुलुल की बातों से नींद बर्बाद करते हो और अपनी इन फालतू की बातों को रफी और मुकेश के गीतों से तुलना करके उनकी आत्मा को भी दुख पहुंचाने का काम कर रहे हो. अपनी पत्नी की बातों से मिश्राजी यह तो जान गया था कि रमा नाराज हो रही है और होती भी क्यों न, यह तो सौ आने सच बात है कि जिस इंसान को रात के तीनों पहर नींद न आये उसे भी चौथे पहर में नींद आ ही जाती है और वह भी कोई सामान्य नींद नहीं गहरी नींद ही होती है और उसी नींद में किसी कारण से व्यवधान उत्पन्न हो जाये, तब अखरना तो स्वाभाविक है. मिश्राजी यह भी जानता था कि पिछले नौ रातों से उसके साथ क्या हो रहा है पर इसमें उसकी कोई गलती नहीं थी. उसकी क्या किसी की भी गलती नहीं थी. भाई सपने पर किसका वश होता है. आज तक कहीं ऐसा हुआ है कि जैसा हम चाहें वैसा ही हम सपना देखें तो फिर मेरे साथ यह क्यों होगा, हां यह अलग बात है कि हम में से ज्यादातर लोग देखे हुये सपनों को भूल जाते है और मुझे वह याद रह जाता हैं विशेषकर पिछले नौ रातों में मैंने जो कुछ देखा है उसकी तो मुझे एक एक बात दृष्य सहित याद है. मिश्राजी रमा को अपने सपनों की बात बतलाना तो चाहता थाए किन्तु अभी नहीं. अभी वह कुछ और मजा लेना चाहता था. इसलिये मजाक करते हुये ही बोला. रमा तुम्हें गाना पसंद नहीं आ रहा था तब यहां से उठकर दूसरे कमरे में चल देती. जब गाने का रील खतम होता गाना भी खुद व खुद बंद हो जाता.

मिश्रा जी के इन सभी बातों के बोलते तक रमा अपने बिस्तर पर उठकर बैठ गई थी और जैसे ही मिश्राजी बोलना बंद किये वह बोली. मेरे वैसा करने से आपका गाना केवल आज के लिये बंद होती न और कल फिर शुरू हो जाती कब तक यहां

से वहां भागती रहती. मुझे तो लगता है कि आपको किसी डाक्टर को दिखाना पड़ेगा. जल्दी डाक्टर के यहां नहीं गये तो किसी बड़े मानसिक रोग के चुंगल में फंस जाओगे. मैं तो कहती हू कि आज सवेरा होने के बाद जल्दी तैयार होकर शहर चलते हैं. पता नहीं आज क्यों मिश्राजी बात को जल्दी समाप्त करने के पक्ष में नहीं था. पहले की बात और थी. पहले मिश्राजी रमा के सामने इतना सोच विचार कर बोलता था कि रमा को उसके आगे बात बढ़ाने का चाहते हुये भी मौका नहीं मिलता था और आज मिश्राजी जानबूझकर रमा को बात बढ़ाने का मौका पर मौकादिये जा रहा था. जैसे ही रमा बोली की सुबह जल्दी से तैयार होकर किसी डाक्टर के यहां चलना है इसी बात पर रमा को बात बढ़ाने का अवसर देते हुये मिश्रा जी ने कहा. क्यों किसी सामान्य एम.डी. के यहां चलना है या फिर किसी मनोचिकित्सक के यहां. कुछ सोची हो कि शहर में डाक्टर के व्दार-व्दार जाकर बोर्ड पढ़ने के बाद निर्णय करेंगे.

मिश्राजी के बातों से रमा समझ गई कि वह जानबूझकर बातों को बढ़ा रहा है. इस कारण मिश्राजी को बिना आभास दिलाये ही वह सरलता से बोली. नौ रातों में आपके व्दारा जिस लक्षण का प्रदर्शन मेरे सामने किया गया है उससे तो यही जान पड़ रहा है कि आपको एम.डी. की नहीं किसी मनोचिकित्सक की ही जरूरत है. अपने उम्मीद से विपरीत जवाब सुनकर मिश्राजी थोड़ा सोचते हुये बोले. तो तुम्हारा मतलब है कि मैं धीरे धीरे पागल हो रहा हूं और मुझे किसी मनोचिकित्सक से जांच करानी चाहिये. ऐसा कौन सा लक्षण तुमने देख ली.

अब मजा लेने की बारी रमा की थी. लेकिन असल भाव को मन में छिपाते हुये बोली. अरे एक दो लक्षण हो तो बतलाऊं. यहां तो लक्षणों का भंडार है फिर भी कह रहे हो तो एक दो लक्षण सुन ही लो और वह यह है कि बार बार आप यही कहते

हैं कि हां, हां, हां मैं सूर्यपुत्र हूं. अब आप ही बतलाईये की आपके खानदान में किसका नाम सूर्य या सूर्य के कोई और पर्यायवाची शब्द में से कोई रहा हो. जहां तक मुझे याद है मेरे ससुर जी मतलब आपके पिताजी का नाम श्री गोवर्धन लाल मिश्रा जी था. फिर बार.बार चिल्लाकर यह कहना कि हां, हां, हां मैं सूर्यपुत्र हूं यह और किसकी निशानी हो सकती है.

रमा की बातों से मिश्राजी भी जान गया कि कुछ देर पहले मैं जैसा इसके साथ कर रहा थाए वहीं अब वह मेरे साथ कर रही है. फिर भी अपने को नासमझ दिखाते हुये पूछा और दूसरा कौन सा लक्षण देखी. अब रमा भी समझ गई थी कि मिश्रा जी जानबूझकर उससे ऐसा प्रश्न करते जा रहा है. इस कारण अब वह मजाक न करके चिढ़ाते हुये बोली. अरे दूसरा लक्षण तो उससे भी बड़ा है और वह यह है कि आप बार बार इस पंक्ति पर ज्यादा जोर दे रहे थे कि जब आपको सूर्यपुत्र होने पर कोई आपत्ति नहीं है तो किसी को क्यों होनी चाहिये. अरे मैं आपसे पूछती हूं कि कभी किसी को इस बात पर आपत्ति करते आपने कभी सुना या देखा है कि वह अमुक का बेटा है. तो फिर भला आपके सूर्यपुत्र होने पर किसी को क्या आपत्ति होगी. है न ये दोनों लक्षण आपको मनोचिकित्सक के पास ले जाने के लिये पर्याप्त.

मिश्राजी अब वास्तविक बातों पर आना चाहता था. इस कारण थोड़ा गंभीर होते हुये पूछा - रमा, अब इधर उधर की बातों को छोड़ों और यह बतलाओ कि सच में मुझे क्या करना चाहिये ? मिश्राजी का यह आत्मसर्पण रमा को अंदर ही अंदर बहुत सुकून दे रहा था और वह इतनी जल्दी इस पल को अपने से होकर छोड़ना नहीं

चाहती थी. इसलिये थोड़ा और चिढ़ाते हुये बोली - यह संकुल समन्वयक का काम करना छोड़ दो.

जैसे ही रमा ने यह बात कही, वैसे ही मिश्राजी अपने बिस्तर से उठते हुये बोला. देखो रमा. मैं तुम से कितने बार कह चुका हूं कि सब कुछ कर सकता हूं लेकिन संकुल समन्वयक का पद नहीं छोड़ सकता और अब दोबारा कभी बोलना भी मत. रमा जानती थी कि उसने मिश्राजी के दुखती रगो पर हाथ रख दी है, जिसका प्रमाण उसके सुनते ही बिस्तर से उठ जाना है. वह यह भी जान रही थी कि अगर मिश्राजी को कुछ और छेड़ा जाये तो वह नाराज भी हो सकता है. लेकिन परिणाम की चिन्ता किये बिना रमा बोली. नहीं छोड़ सकते तो रात भर बोलते रहो हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं. और अब आपके पक्के इरादे को देखकर तो मुझे लगने लगा है कि बात दूर तलक तक जायेगी. दूर तलक कहने से मेरा आशय है कि अब से आप केवल अपने आप को सूर्यपुत्र ही नहीं, कभी राजपुत्र, कभी कृष्णपुत्र तो कभी इन्द्रपुत्र भी कहना शुरू कर दोगे. चलो यहां तक भी ठीक रहेगी. मुझे तो डर है कि कभी ऐसे ही नींद में बड़बड़ाते बड़बड़ाते यह न बोल दो कि हां हां हां मैं रावण पुत्र हूंए मैं कंस पुत्र हूं या फिर धृतराष्ट्र पुत्र हूं.

मिश्रा जी के लिये अब रमा का मजाक सहना मुश्किल हो रहा था. इस कारण अब वह सचमुच गुस्सा होते हुये कहा. रमा अब तुम यह कुछ ज्यादा ही बोल रही हो. मेरी स्थिति को नहीं समझना चाहती तो मत समझो. पर अब ज्यादा मजाक मत उड़ाओ.

रमा भी अब समझ गई थी कि ज्यादा बोलना ठीक नहीं रहेगा. अतः विषय पर आते हुये बोली. मैं तो शुरू से ही पूछ रही हूं. आप ही है जो मजाक पर मजाक करते जा रहे थे तो मैं भी सोंची कि चलो थोड़ा मिश्राजी का साथ दे दिया जाये. अच्छा चलो अब बतलाओ की क्या देखकर बड़बड़ाना शुरू करते थे. रमा के जवाब को अपने अनुकूल पाकर मिश्राजी ने बतलाना शुरू किया. रमा तुम तो जानती हो कि संकुल समन्वयक बनने के बाद कैसे मेरा जीवन संकुल और घर तक सीमित हो गया. इससे पहले कि मिश्राजी अपनी बात पूरी कर पाते रमा तुरंत टोकते हुये बोली. मिश्राजी आप चाहे नाराज हो या गुस्सा मेरी बला से. पर आप जहां गलत बोलेंगे वहां तो मैं आपको टोकूंगी ही. इस पर मिश्राजी ने पूछा. अरे तो मैं क्या गलत बोल दिया. अभी तो मुश्किल से दो पंक्ति ही बोला हूं और उसमें भी गलती निकाल ली. बड़ी पारखी हो गई हो.

रमा हंसते हुये बोली. सब संगति का असर है मिश्राजी. और आपकी गलती यह है कि आपने कहा कि संकुल समन्वयक बनने के बाद आपका जीवन संकुल और घर तक सीमित हो गया है. जबकि वास्तविकता यह है कि आप केवल और केवल संकुल के होकर रह गये हैं. घर तो केवल सोने के लिये आते हो और ओ भी आधे अधूरे. आधे समय तो बड़बड़ाते रहते हो हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं. इस बार रमा की बातों को सुनकर मिश्राजी अपनी हंसी को रोक नहीं पाये. मन भर हंसने के बाद मिश्राजी बोले. रमा तुम शायद सही कह रही हो. शायद सही नहीं मिश्राजी. सौ प्रतिशत सही कह रही हूं. रमा भी हंसते हुये ही बोली.

मिश्राजी ने आगे बोलते हुये कहा . तो अब इजाजत हो तो बात आगे बढ़ाऊं.

रमा बोली. मगर एक शर्त है मिश्राजी.

मिश्राजी. कौन सी शर्त.

रमा - यही मिश्राजी कि आप मुझे पहली रात से लेकर आज नौंवी रात तक की बातों को क्रम और विस्तार से बतलाओगे. तभी तो मैं जानूंगी न कि आप अपने को कैसे और क्यों सूर्यपुत्र बोले जा रहे हो.

मिश्राजी - अच्छा तो यह शर्त है. तो अब सुनो.....

पहली रात

पहली रात को सपने में होने वाली बातों का उल्लेख करते हुये मिश्राजी ने कहा. रमा तुम महाभारत की उस कथा के बारे में तो जानती हो न जिसमें ऋषि ने प्रसन्न होकर कुन्ती को वरदान दिया था कि तुम जिस भी देवता का आह्वान करोगी वह तुम्हारे सामने प्रकट हो जायेगा और अपने समान ही तुम्हे पुत्र देगा.

अपने पति की बातों को सुनकर रमा बोली. हां मैं यह सब टी.वी. में आने वाली महाभारत सिरियल में देखी थी और आप जिस ऋशि के वरदान की बात कर रहे हैं उस ऋशि का नाम दुर्वासा था. उनके व्दारा दिये गये वरदान सही होता है कि नहीं यह देखने के लिये कुन्ती ने सूर्यदेव का आह्वान की और उससे उसे कर्ण नाम का एक पुत्र हुआए जिसे उसने लोकलाज के कारण गंगा नदी में प्रवाहित कर दी थी.

रमा की बातों से प्रसन्न होकर मिश्राजी बोले. वाह रमा. तुम्हें तो सब कुछ याद है. लगता है महाभारत सिरियल को खूब मन लगाकर देखती थी. अपनी प्रशंसा से गदगद होकर रमा बोली. और नहीं तो क्या मिश्राजी. मैं भले से उस समय आठवीं पढ़ती थी लेकिन कहानी इतना मजेदार थी कि आज तक एक एक बात मुझे याद है. पर मिश्राजी मुझे यह बात नही समझ आ रही है कि इन सबका आपके बड़बड़ाने से क्या संबंध है.

रमा की उत्सुकता शांत करते हुये मिश्राजी बोले. देखों रमा तुमने यहां तक तो बतला दी कि क्यों और कैसे कुन्ती ने सूर्यदेव और अपने पुत्र को गंगा में प्रवाहित

कर दी और अब आगे की कहानी को मैं बतला रहा हूं. कुन्ती के व्दारा ऐसा करने से यह तो स्पष्ट हो गया कि कर्ण का जन्म लेना न तो कुन्ती को ठीक लगा और न सूर्यदेव को क्योंकि कुन्ती व्दारा कर्ण को जन्म महज एक जिज्ञासा शांति का परिणाम था अैर सूर्यदेव व्दारा उसे कुन्ती को दिया जाना वरदान पूरा करने की औपचारिकता मात्र. अगर कर्ण का जन्म लेना दोनों को मन से अच्छा लगा होता तो न तो कुन्ती उसे त्यागती और न ही सूर्यदेव इस बात को छिपाता.

इतना बतलाने के बाद मिश्राजी थोड़ी देर चुप रहा. इस अवसर को उचित जानकर रमा ने प्रश्न की. पर मिश्राजी इस घटना का आपके जीवन से क्या संबंध है और ओ भी इतना गहरा कि रात में सपने में आप देखकर बोलते रहते हैं हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं. रमा व्दारा पूछे गये प्रश्नो का उत्तर देते हुये मिश्राजी बोले. रमा जिस तरह कर्ण का जन्म अनिच्छा से हुआए उसी तरह प्रत्येक संकुल के लिये संकुल समन्वयक पद का जन्म हुआ. मैं इसे अनिच्छा से जन्म देना इस कारण कह रहा हूं क्योंकि इसके जन्म के तुरंत बाद से ही जन्म देने वाले ने इसका परित्याग कर दिया.

अपने पति की अस्पष्टतापूर्ण उत्तर से असंतुष्ट रमा बोली. मिश्राजी मुझे आपकी यह बात समझ नहीं आ रही है कि एक तरफ तो आप कह रहे हैं कि संकुल समन्यक पद को जन्म देने वाले ने इसका परित्याग कर दिया और दूसरे तरफ मैं देखती हूं कि हर संकुल में एक एक व्यक्ति संकुल समन्वयक के पद पर कार्य कर रहे हैं. ऐसा विरोधाभास आपके जवाब में कैसे है.

रमा को समझाते हुये मिश्राजी ने कहा. रमा अब तुम फिर थोड़ा महाभारत की कहानी को याद करो. उसमें यद्यपि कर्ण का परित्याग कर दिया गया थाए तथापि कर्ण का अस्तित्व तो था ही न. उसी प्रकार संकुल समन्चयक पद को जन्म देने वाले ने उस पद के मूल उद्देश्य का परित्याग कर दिया किन्तु पद का अस्तित्व तो बना हुआ ही है और यही कारण है कि तुम्हें हर संकुल में एक एक व्यकित संकुल समन्वयक के पद पर कार्य करते नजर आते हैं. मिश्रा जी के उत्तर से संतुष्ट होने के बाद रमा बोली. तो मिश्राजी ऐसा होने से आपको पीड़ा क्यों हो रही है.

मिश्राजी ने कहा. रमा तुम भी न कभी कभी बचकाना प्रश्न कर देती हो. अब जरा सोच के देखो कि अगर कुन्ती और सूर्यदेव ने कर्ण का परित्याग नहीं किया होताए तब हम कर्ण को किस रूप में जानते और समझते निश्चित रूप से कर्ण की पहचान जैसा आज है उससे बिल्कुल भिन्न होता. उसी प्रकार अगर संकुल समन्वयक पद के जन्मदाता व्दारा पद के मूल उद्देश्य का परित्याग नहीं किया गया होताए तब इस पद की गरिमा और महत्व निश्चित रूप से भिन्न होता. यह तो मानोगी कि नहीं.

रमा जवाब देते हुये बोली. मिश्राजी आपकी बात कुछ अंश तक तो ठीक है और वो ऐसे कि आपने चाहे कर्ण हो या आपके पद हो उसके परित्याग के लिये पूर्ण रूप से जन्मदाता को ही जिम्मेदार ठहरा दिये. आपको इससे आगे बढ़कर देश काल और परिस्थिति पर भी विचार करना चाहिये.

मिश्राजी थोड़ा आवेश में आते हुये बोले. कैसा देशए काल और परिस्थित रमा. ऐसी बातों का सहारा वे लोग लेते हैं जो मूल बातों से ध्यान भटकाना चाहते हैं. तुम्हारी बात का तो सीधा सीधा मतलब यही निकलता है कि कुन्ती का कोई दोष ही नहीं था या फिर हमारे मामलों में हमारे जन्मदाताओं का.

रमा बोली - मिश्राजी आपमे यही एक खामी है. कोई भी आपके बातों के विपरीत बात कहे तो आप तुरंत आवेश में आ जाते हैं. मैंने केवल अपनी बात रखी और ओ भी इस आधार पर की जिस समय की हम बातों को दृष्टांत रखकर बातें कर रहे हैं उस समय किसी अविवाहित कन्या से बच्चे का जन्म लेना निश्चित रूप से भयंकर आपत्तिजनक बात रही हेगी और मैं समझती हूं कि शायद कुन्ती ने कर्ण का परित्याग इसी कारण की होगी. वैसे ही आप लोगों के जन्मदाता के मन में जो कुछ रहा होगा उसके अनुसार उन्होंने यह पद सृजित कर दिये किन्तु बाद में धीरे धीरे जिसे आप मूल उद्देश्य कह रहे हैं उसमें समय की मांग के अनुसार और उद्देश्य जुड़ते गये और आज की स्थिति में आपको लगता है कि आपके पद की जन्मदाता ने परित्याग कर दिया है जो सही नहीं है. क्या आप ऐसा सोंचते है कि कर्ण का परित्याग करते समय कुन्ती को तनिक भी पीड़ा नहीं हुई थी. हुई थी मिश्राजी और कुन्ती की वेदना को केवल कुन्ती ही जानती और समझती थी. उसी प्रकार आपके पद के जन्मदाता ही जानते होंगे कि पद के मूल उद्देश्य का परित्याग करते समय उन्हें कितना पीड़ा हुआ होगा. और उनकी यह वेदना समय समय पर आपके पद से संबंधित दिशा निर्देशों में दिखाई भी देती है.

जब तक रमा बोलती रही तब तक मिश्राजी बिल्कुल ध्यान से बातों को सुनता रहा. जब रमा ने अपनी बात समाप्त कर ली तब मिश्राजी बोले - कितना सरल

होता है न रमा किसी को देश काल और परिस्थिति का लाभ देकर दोषमुक्त कर देना. पर उसी देश काल और परिस्थिति को ध्यान में रखते हुये किसी ने पीड़ित पक्ष को ध्यान में रखकर कभी सोचने का प्रयास क्यों नहीं किया. और मैं कहता हूं कि जिस देश काल और परिस्थिति का लाभ देकर लोगों के व्दारा कर्ण के मामले में कुन्ती को और हमारे पद के मामले में पद के जन्मदाता को दोषमुक्त घोषित किया जाता है उन्हीं लोगों को इस बात पर भी तो समय निकालकर विचार करना चाहिये रमा कि उसके कारण कर्ण और हमारे पद को धारण करने वाले व्यक्ति को पीड़ा के कितने प्रकार और कितने दौर से गुजर कर अपने अस्तित्व की पहचान के लिये संर्घष करना पड़ा.

मिश्राजी की बातों को सुनकर रमा ने महसूस की कि मिश्राजी अपने पद के लिये न्याय चाहता है. अतः उनकी पीड़ा को कम करने का प्रयास करती हुई बोली. मिश्राजी आपका यह कहना कि कर्ण या आपके पद के सम्मान के संबंध में किसी ने विचार करने का प्रयास नहीं कियाए इसे मैं नहीं मानती. यह लोगो के विचार का ही प्रतिफल है कि महाभारत में सबसे ज्यादा सहानुभुति अगर किसी को मिला तो वह कर्ण ही थाए उसी प्रकार आपके विभाग में अगर किसी पद के साथ लोगों की सहानुभूति है तो वह आपका पद ही है.

रमा के जवाब से असंतुष्ट मिश्राजी ने कहा. तो रमा क्या तुम सहानुभूति को न्याय मानती हो. और अगर ऐसा मान रही हो तो मुझे किसी की सहानुभूति नहीं चाहिये. तुमको याद है, एक बार कुन्ती अर्जुन के जीवन रक्षा के लिये कर्ण के पास जाकर बोली थी. बेटा मैं एक मां के नाते तुमसे कह रही हूं कि मेरे अर्जुन का प्राण मत लेना. कुन्ती के शब्दों में जो ममत्व था उसे महसूस करके कर्ण ने कहा था

कि मां जाओ आपके पांच बेटे सुरक्षित रहेंगे चाहे उसमें एक मैं रहूं या अर्जुन. लोग इसे भले से यह कह दे कि कर्ण ने अपनी मां को स्पष्ट वचन नहीं दिया था कि अर्जुन ही रहेगा किन्तु मैं इसे कुन्ती व्दारा कर्ण के प्रति दिखाई गई सहानुभूति का परिणाम ही मानूंगा कि कर्ण सुरक्षित नहीं रहता. रमा इस प्रकार तुम स्वयं समझ गई होगी की सहानुभूति कभी भी न्याय का स्थान नहीं ले सकता. उसी प्रकार हमारे पद के साथ भले से विभाग के कर्मचारियों और अधिकारियों की सहानुभूति हो किन्तु उससे इस पद के साथ न्याय नहीं हो रहा है.

अब रमा के मन में यह जानने की ईच्छा उत्पन्न हुई कि आखिर मिश्राजी अपने पद के साथ होने वाले अन्याय के लिये मूलतः जिम्मेदार किसे मानता है और इसी ईच्छा से प्रेरित होकर वह बोली. मिश्राजी चलो आपकी बातें सुनकर मैं यह मान भी लेती हूं कि कर्ण के साथ होने वाले अन्याय के लिये उसकी जन्मदात्री कुन्ती जिम्मेदार थी और इस बात के लिये इतिहास में यदा कदा उन्हें उलाहना का सामना भी करना पड़ा है पर आपके पद के मामले में होने वाले अन्याय के लिये कोई एक जिम्मेदार हो तो उसके संबंध में बतलाईयेए ताकि कुछ किया जा सके.

अपनी पत्नी की बातों को सुनने के बाद मिश्राजी कुछ देर शांत बिस्तर पर ही बैठकर सोंचता रहा. उन्हें इस तरह चुपचाप बैठा देखकर रमा सोंची की कहीं उन्होंने कोई गलत प्रश्न तो नहीं कर दी. एक बार पुनः अपनी कही बातों को स्मरण की और इस निश्कर्ष पर पहुंची की उनके व्दारा पूछे गये प्रश्न में कोई गलती नहीं है. रमा मिश्राजी के कंधे में हाथ रखते हुये बोली. मिश्राजी किस सोच में पड़ गये.

मिश्राजी बोले. क्या बतलाऊं रमा. हमारे पद के साथ तो कर्ण से भी बढ़कर कई गुणा ज्यादा अन्याय हुआ है. कर्ण के समक्ष कम से कम यह बात तो स्पष्ट थी कि उसके जन्मदाता कौन है. इसी कारण जब कभी उनका मन अन्याय से विचलित होता था वह सीधा सीधा आरोप लगाकर मन को हल्का कर लेता था. हमारे पद के साथ तो यह सुविधा भी नहीं है. तुम इससे पहले बोल रही थी न कि प्रत्येक संकुल में इस पद को धारण करने वाले व्यक्ति कार्य कर रहे हैं वहां तक तो सही है. पर इन सभी व्यक्तियों के पद का जन्मदाता एक ही हो इस बात में संदेह है. क्योंकि समय के साथ इस पद को जन्म देने वाले व्यक्तियों की एक श्रृंखला बन गई है.

मिश्राजी की बातों को सुनकर रमा को थोड़ी हंसी आ गई और हंसते हुये ही वह पूछी. मिश्राजी आज तक तो मैंने यहीं देखी और सुनी है कि इस जगत में जो आता है चाहे वह प्राणी हो या कोई पद उसका जन्मदाता एक ही होता है लेकिन आपसे आज पता लग रहा है कि इस जगत में एक पद ऐसा भी है जिसका जन्मदाता कोई एक न होकर श्रृंखला है.

रमा की बातों से मर्माहत मिश्राजी बोले. यही तो इस पद की पीड़ा का कारण है रमा. संकुल स्तर से राज्य स्तर तक इस पद को जन्म देने वालों की एक श्रृंखला है. इस पद को धारण करने वाले कुछ लोगों का जन्मदाता संकुल कुछ का विकासखण्ड कुछ का जिला और कुछ का राज्य है. ऐसे में भला इस पद को लोगों की हंसी और सहानुभूति के अलावा मिल ही क्या सकता है. सम्मान की बात सोंचना तो बहुत दूर की चीज है. मिश्राजी की बातों से रमा के हृदय में भी इस पद

के प्रति सहानुभूति उत्पन्न हुई और उसी के वशीभूत होकर बोली. तो मिश्राजी आप लोग इसके लिये कुछ करते क्यों नही.

रमा के प्रश्नो का जवाब देते हुये मिश्राजी ने कहा. रमा तुम भी कभी कभी न बिना सोचे समझे प्रश्न कर देती हो. अरे जन्म लेने वाले को थोड़ी यह पता रहता है कि उसे कौन जन्म दे रहा है. यह तो उसे जन्म लेने के बाद पता चलता है कि उसका जन्मदाता कौन है. लेकिन हां जन्म देने वाले को पहले से ही यह पता रहता है कि वह किसे जन्म दे रहा है. इस प्रकार हमारे पद की जन्मदाता की अनिश्चितता के कारण लोग आये दिन इस पद का मजाक उड़ाकर अपमान करते रहते हैं. जैसे थोड़ी देर पहले तुम भी हंस रही थी.

अपने हंसी से मिश्राजी को हुई पीड़ा को कम करने का प्रयास करते हुये रमा बोली. इसी कारण तो कह रही हूं मिश्राजी कि आप जितने भी लोग इस पद को धारण करने वाले हैंए सब मिलकर यह प्रयास करिये कि इस पद का जन्मदाता एक हो और जिस दिन ऐसा हो गया देख लेना लोगों की हंसी और अपमान करने की प्रवृत्ति दोनों का अंत हो जायेगा.

रमा की बातें मिश्रा जी को भी जंचा और मन ही मन निश्चय किया कि वह इस दिशा में तब तक प्रयास करता रहेगा जब तक इस पद का एक जन्मदाता निश्चित न हो जाये. मन ही मन निश्चय कर लेने के बाद मिश्राजी बोले. रमा तुमने यह सुझाव देकर मेरी पहली रात की घटना से उत्पन्न पीड़ा का अंत कर दिया और इसके लिये तुम्हे धन्यवाद.

रमा बोली - मिश्राजी इसमें धन्यवाद की क्या बात हैघ् मैं आपकी अद्र्धांगनी हूं. इस बात को लेकर जितनी पीडा आपको होती है उसमें से आधी पीड़ा को हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं कहकर मेरी तरफ भेज देते थे और आपकी आधी पीड़ा मुझे सहनी पडती थी.

मिश्राजी समझ गया कि रमा अब फिर मजाक करने पर आ गई है. इस कारण बिना नाराज हुये बोला. आखिर अर्धांगिनी जो हो. रमा बोली - ठीक है ठीक है मिश्राजी. अब समय व्यर्थ न जाया करिये और दूसरी रात की घटना के बारे में बतलाना शुरू करिये. मिश्राजी. तो सुनो.....

दूसरी रात

दूसरी रात की बातें बतलाना आरंभ करते हुये मिश्राजी ने कहा - रमा जब तक व्यक्ति संज्ञान नही हो जाताए तब तक उन्हें दुःख.सुख का मतलब भी पता नहीं चलता. हां यह अलग बात है कि हर व्यक्ति एक ही उम्र में संज्ञान नहीं होते. कोई जल्दी हो जाता है तो कोई थोड़ी देर में. यही बात कर्ण पर भी लागू हुआ और हमारे पद पर भी. चूंकि कर्ण उस दौर का विलक्षण बच्चा थाए इस कारण उनमें लोगों की बातें जानने और समझने की अद्भुत क्षमता होती थी.

मिश्राजी की बातों को सुनते हुये रमा बोली. मिश्रा जी आप कर्ण और अपने पद धारण करने वाले व्यक्ति की किस अद्भुत क्षमता का बखान करना चाह रहे हैं? खैर कर्ण की तो छोड़ो. उन्हें तो मैं सीधा सीधा जानती नहीं. पर आपके साथ तो मैं लगभग पन्द्रह वर्शों से रह रहीं हूं. मुझे तो आप में ऐसी कोई अद्भुत क्षमता नजर नहीं आई.

मिश्राजी यह तो जान गये कि रमा उस पर तंज कस रही है. फिर मन में सोचा कि उसके आस पास रहने वाले व्यक्तियों में से कुछ एक को छोड़कर ऐसा कौन होगा जिसने उनके इस पद को लेकर कभी न कभी तंज न कसा हो. रमा में कम से कम इतनी अच्छाई तो है कि वह तंज भले से कसे पर उनकी बातों को गंभीरता से न केवल सुनती है बल्कि समय समय पर प्रश्न करके सोच समझकर सुझाव भी देती है. दूसरे लोग तो इतना भी नहीं करते. अतः मिश्राजी रमा की बातों का बुरा न मानकर बोलना जारी रखा. रमा तुम कर्ण के बारे में यह तो

जानती होगी कि जब वह पढ़ने लिखने के उम्र का हुआ तो वह भी गुरू द्रोणाचार्य के पास जाकर पढ़ने लिखने की ईच्छा व्यक्त की या इसे दूसरे शब्दों में यह समझ सकती हो कि उसे पालने वाले माता पिता ने शिक्षा के लिये गुरू द्रोणाचार्यजी के पास लेकर गये. और जानती हो वहां द्रोणाचार्य ने यह कहते हुये उसे पढ़ाने से साफ इंकार कर दिया कि वह केवल राजकुल में पैदा हुये बच्चों को ही पढ़ाता है उसके जैसे सामान्य घरों के बच्चों को नहीं. यह कर्ण के साथ होने वाली अन्याय और उसके संज्ञान होने की शुरूआत थी.

मिश्राजी की बातों को ध्यान से सुनती हुई रमा मिश्राजी को थोड़ा रूकने का ईशारा करके थोड़ा जोर से बोली. वाह मिश्राजी वाह एक तो उटपुटांग सपने देखते हो और उसमें भी जो तुलना करने वाले होए वह तो और उटपुटांग ही होगा. आपकी बातों से मैं यह समझ गई कि जिस तरह गुरू द्रोण ने कर्ण को शिक्षा देने से इंकार कर दिया था उसी तरह आप यह कहेंगे कि आपके पदधारित व्यक्ति को भी आधुनिक कोई गुरू द्रोण ने शिक्षा देने से इंकार कर दिया और आपके पद के साथ भी कर्ण जैसा ही अन्याय हो गया. समझ नहीं आती की तारीफ आपके सपनों की करूं या आपके तुलना की.

मिश्राजी ने शांत रहकर ही बोलना शुरू किया. मैं सच कह रहा हूं रमा. कर्ण के बारे में तुम जानती होए इस कारण कर्ण वाली बात को स्वीकार कर रही हो. हमारे पद की शिक्षा.दीक्षा के साथ जो अन्याय हुआ हैए उसके बारे में नहीं जान रही हो इस कारण अन्याय हुआ हैए ऐसा मान भी नहीं रही हो. इसके लिये तुम्हें थोड़ा विस्तार से बतलाना पड़ेगा. रमा तुम यह तो जानती हो कि मैं कितना ज्यादा पढ़ने.लिखने में रूचि रखने वाला व्यक्ति हूंए वैसे ही जितने भी लोग इस पद को

धारण किये हुये हैं वे सभी भी पढ़ने लिखने में रूचि रखने वाले व्यक्ति हैं. लेकिन दुर्भाग्य देखों जब्र से इस पद को धारण किये हैं तब से ही न पढ़ने का अवसर मिला और लिखने का. कभी कभी तो मैं सोचता हूं कि मेरे जैसे ही इस पद को धारण करने वाले सभी व्यक्ति पढ़ना लिखना जानता भी है कि सब कुछ भूल गये हैं. और यह सब कुछ उसी प्रकार जानबूझकर किया गया है जिस प्रकार द्रोणाचार्य जी ने कर्ण के साथ किया था. फर्क केवल इतना है रमा कि उस समय गुरूद्रोण ने कर्ण से कह दिया था कि मैं केवल राजकुमारों को ही शिक्षा देता हूं और आज इस पद को धारण करने वाले व्यक्ति से कहा जाता है कि पढ़ना लिखना शिक्षकों के लिये है इस पद धारित व्यक्ति के लिये नहीं.

मिश्राजी के चुप होते ही रमा बोली. पर मिश्राजी इसमें आपको अन्याय कहां से दिखाई देने लगा? उस समय का जैसा चलन था उसके अनुसार गुरू द्रोण ने कर्ण से कह दिया और इस समय आपके विभाग में जो चलन है उसके अनुसार आपके पद धारित व्यक्तियों से कहा गया. और यह सच भी तो हैं कि राजकाज की बातें और युध्द कला की विद्या राजकुमारों के लिये उपयुक्त थी और कर्ण चूंकि प्रत्यक्ष रूप में राजकुमार नहीं थाए सो गुरू द्रोण ने कह दिया. इसी प्रकार बच्चों को पढ़ाने लिखाने की जिम्मेदारी शिक्षकों की हैए इसलिये सतत् पढ़ना लिखना शिक्षकों के लिये हैए आपके जैसे पदधारित व्यक्तियों के लिये नहीं.

यह देखकर कि रमा भी अन्याय के साथ खड़ी हो गई हैए मिश्राजी को दुख हुआ और इस दुख की घड़ी में भी अपने विचार शक्ति को बनाये रखते हुये मिश्राजी सोंचे कि कोई भी व्यक्ति दो कारण से ही अन्याय के साथ खड़ा होता है प्रथम जब वह खुद अन्यायी हो और दूसरा तब जब उसे संबंधित विषय की समग्र

जानकारी न हो. मिश्राजी जितना रमा को जानता था उसके अनुसार वह इस बात पर तो दृढ़ था कि रमा अन्यायी नहीं है. अब रह गयी बात दूसरे प्रकार की तो इसके समाधान के लिये मिश्राजी ने पूरी बात को एक बार फिर से रमा को समझाने का निश्चय किया और समझाते हुये बोला. देखो रमा शिक्षा पर सबका अधिकार होना चाहिये. किसी भी व्यक्ति को किसी भी आधार पर शिक्षा से वंचित करना बहुत बड़ा अन्याय हैए जो गुरू द्रोण ने कर्ण के साथ किया था और हमारे पदधारित व्यक्तियों के साथ अब के गुरू द्रोण कर रहे हैं और जानती हो इसका शिक्षा से वंचित होने वाले व्यक्तियों के जीवन पर कितना प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है. जीवन की दिशा हीं बदल जाती है. अब कर्ण को ही ले लो. जब गुरू द्रोण ने उन्हें शिक्षा देने से मना किया तब झूठ बोलकर परसुराम जी से शिक्षा ग्रहण किया और अंत में परिणाम क्या हुआए जहां उसे अपनी विद्या की सर्वाधिक जरूरत थी वहीं भूल गया और मृत्यु को प्राप्त हुआ. कभी कभी तो हमारे पद धारित व्यक्तियों के मन में भी आता है कि कर्ण के समान ही अपनी वास्तविकता छिपाकर पढ़ लिख लें. पर परिणाम के डर से ऐसा भी नहीं कर सकते.

मिश्राजी के मुंह से इस पदधारित व्यक्तियों के मन में पढ़ने लिखने की ललक सुनकर रमा प्रसन्न हुई और प्रसन्नपूर्ण मुद्रा में ही बोली. मिश्राजी यह तो बहुत अच्छी बात है और इसके लिये तो मेरा कहना है कि जिस तरह कर्ण ने अपना पहचान छुपाकर शिक्षा के प्रति अपनी ईच्छा की पूर्ति की उसी तरह आप के पद धारित सभी व्यक्ति स्व अध्ययन को अपना आधार बनालें. मेरा विश्वास है कि अगर ऐसा कर लिये तो आप लोग किसी भी विषय में दूसरे शिक्षकों से कम नहीं रहेंगे और सम्मान भी मिलेगी.

रमा की बातों से सहमत होते हुये मिश्राजी ने कहा. तुम्हारा सुझाव तो बहुत अच्छा है किन्तु इसमें मुख्य समस्या यह है कि स्व-अध्ययन के लिये हमारे पद धारित व्यक्तियों के पास समय ही नहीं होती और जब कभी समय निकलने की संभावना बनती भी है तो कोई न कोई दूसरे कामों में फंसा दिये जाते हैं. कभी कभी तो मैं सोचता हूं कि यह सब जान बूझकर किया जाता है. अब रमा मैं तुम्हें कहां तक बतलाऊं अपने विभाग की काम तो करते हैं ऐसा कौन सा विभाग है जिसका काम हमारे पदधारित व्यक्ति से नहीं कराया जाता और ऐसे में तुम बोल रही हो कि स्व अध्ययन करके अपनी तृष्णा शांत करो.

मिश्राजी के बोलने के बाद रमा बोली. देखो मिश्राजी मुझे तो इस सूक्ति पर पूरा विश्वास है कि "जहां चाह है वहां राह है" अगर आप भी इस पर विश्वास रखते होंगे तब मेरी बातों को ध्यान से सुनिये और मैं कहना यह चाह रही हूं कि आज कल तकनीक का युग है. आपके जैसे सभी पदधारित व्यक्ति के पास स्मार्ट फोन है और उसमें सभी के व्दारा व्हाट्सपए फेसबुमए ट्वीटर के अतिरिक्त अन्य शैक्षिक दृष्टि से उपयोगी एप और आन लाईन कोर्स करने की सुविधा होती है. आप सभी राज्य स्तर पर अपना एक ग्रुप बनाईये जिस पर केवल अकादमिक मुद्दों पर ही चर्चा हो. इस प्रकार आप सभी स्व-अध्ययन की प्रक्रिया से जुड़ जायेगे और शिक्षकों के समान पढ़ने लिखने की अभिलाशा भी पूरी हो जायेगी और अगर इतना भी नहीं कर सकते तो अपने विभाग के अधिकारियों से मांग करो कि आपके पदधारित सभी व्यक्तियों को भी शिक्षकों के समान ही पढ़ने लिखने का अवसर मिले.

रमा की सुझावों पर मिश्राजी बोले. रमा तुम्हारी यह सभी सुझाव संभव हो सकता थाए लेकिन तबए जब इस पद का जन्मदाता एक होता और जम्नदाता व्दारा पद के मूल उद्देश्य को विस्मृत नही कर दिया गया होता. आज तो अलग.अलग स्तर पर अलग-अलग जन्मदाताओं के व्दारा अलग-अलग गुणत्ता के पद धारित व्यक्ति काम कर रहे हैं. उनमें से कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें स्मार्ट फोन की अकादमिक ऐप या आनलाईन कोर्स से कोई मतलब नहीं है. उसी प्रकार कुछ ऐसे भी है जिन्हें पढ़ने लिखने की निरंतरता बनाये रखने से कुछ लेना देना नहीं है. ऐसे में जो मेरे जैसे पदधारित कुछ लोग हैं, जिन्हें इनके कारण नुकसान उठाना पड़ रहा है और उसमें सबसे बड़ा नुकसान इस पद की गरिमा और सम्मान की है.

मिश्राजी कुछ पल रूकने के बाद बोले. रमा आज जो लोग हम पर हंसते हैं तंज कसते हैं, जानती हो उसका प्रमुख आधार क्या हैए उसका प्रमुख आधार है गुणवत्ताहीन कुछ व्यक्तियों का इस पद पर काबिज हो जाना. दो चार लोगों की नकारात्मक छवि बहुत की सकारात्मक छवि पर हावी हो गई है.

इससे पहले कि मिश्राजी अभी और आगे कुछ कहते रमा बीच में बोली. मिश्राजी माफ करना आपको बीच में टोक रही हूं. यह कितनी विडम्बना की बात है कि दो चार लोगों की नकारात्मक छवि बहुतो की सकारात्मक छवि को खराब कर देती है और हम कुछ नहीं कर पाते. क्या ऐसा नहीं हो सकता कि बहंतों की सकारात्मक छवि कुछ की नकारात्मक छवि पर हावी होकर उन्हें अपना जैसा बना लें.

रमा जो बात मिश्राजी से बोली थीए वह थी बहुत गहरी और पते की. कुछ देर के लिये तो मिश्राजी भी सोच में पड़ गये कि रमा को क्या जवाब देना चाहिये या बिना जवाब दिये ही दूसरे रास्ते से निकल जाना चाहिये. पर अंत में मिश्राजी ने सोचा कि रमा जो उसकी बातों को इतना मन लगाकर सुन रही है उसका एक कारण उन दोनों के बीचे होने वाली संवाद भी है. अगर इस वक्त प्रश्न को कठिन मानकर बिना उत्तर दिये आगे बढ़ा जाता है तो इसका सीधा प्रभाव रमा की रूचि पर पड़ेगी और बहुत संभावना है कि रमा स्पष्ट शब्दों में उससे यह कहे कि मिश्राजी अब आप अपनी कहानी बंद कराए फिर कभी फुर्सत मिलेगी उसमें सुन लूंगी और ऐसा होना उसके मानसिक स्वास्थ्य के लिये सही नहीं होगा. अतः बहुत सोच विचारकर मिश्रा जी इस निश्कर्ष पर पहुंचा कि रमा को जवाब तो जरूर दूंगा. हां संतुष्ट होना और न होना उसके ऊपर है. जवाब देते हुये मिश्राजी बोले. रमा सबसे पहले मैं तुम्हें जवाब देने के पहले तुमसे एक प्रति प्रश्न करता हूं और वह प्रश्न यह है कि मान लो मैं तुम्हारे प्रश्न का जवाब नहीं देताए तब तुम क्या सोंचती.

मिश्राजी के प्रति प्रश्न का उत्तर देते हुये रमा बोली. यही मिश्राजी की देखों यह कैसा आदमी है जो मेरे एक प्रश्न का उत्तर देने में टाल मटोल कर रहा है और यह बात मुझे अच्छी भी नहीं लगती. रमा का जवाब सुनकर मिश्राजी बोले. बस रमा तुम्हारे इसी जवाब में ही तुम्हारे मूल प्रश्न का उत्तर निहित है. जिस तरह तुम मेरे एक नकारात्मक बात से मेरी सारी सकारात्मक बाते भुला देती उसी तरह लोगों की प्रवृत्ति होती है. जहां किसी में थोड़ी सी बुराई या कमी देखी वहीं उसकी सारी गुणो और अच्छाईयों को नजरअंदाज कर दिया जाता है. अब तुम कर्ण को ही ले लो. कर्ण गुणों की खान थी पार लोग उनकी अच्छाईयों को कम और कमियों को ही

ज्यादा चर्चा करते हैं. कोई कहता है कि कर्ण को अपना पहचान छुपाकर शिक्षा ग्रहण नहीं करना था तो कोई कहता है कि चाहे जैसी भी परिस्थिति बनती उसे दुर्योधन की ओर सम्मिलित नहीं होना था.

रमा अपने पति की बातों से संतुष्ट होकर बोली. मिश्राजी आपकी बातें सुनकर तो मैं समझ गई कि आपके जैसे पदधारित ऐसे बहुत से व्यक्ति हैं जिन्हें पढने लिखने में बहुत रूचि है. किन्तु काम की अधिकता कहो या दूसरे कामो में लगा दिये जाने के कारण अवसर नहीं मिलता और मन में पढ़ने लिखने की तड़प निरंतर बनी रहती है. और आप में तो यह तड़फ कुछ ज्यादा ही दिखाई देती है. आपकी इस तड़फ को देखकर आपको मेरी यही सलाह है कि रास्ता खोजने से रास्ता जरूर मिलता हैए इस सिध्दांत पर चलते हुये पढ़ने लिखने का समय निकालिये. तभी आपका मन शांत हो सकता है. क्योंकि मैं यह भी जानती हूं कि कर्ण के जैसे पहचान छुपाकर आप शिक्षा ग्रहण अर्थात कहने का आशय है पढ़ लिख नहीं पाओगे.

रमा की सुझावों का जवाब देते हुये मिश्राजी बोले. जरूर रमा. मैं तुम्हारे सुझावों पर शत प्रतिशत अमल करने का प्रयास करूंगा.

रमा हंसते हुये बोली. करना ही पड़ेगा मिश्राजी और जानते हैं अगर नहीं करेंगे तो क्या होगा ? मिश्राजी भी हंसते हुये पूछा. क्या होगा रमा ?

रमा - यही बड़बड़ाए बड़ बड़ाकर कहते रहोगे. हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं.

तीसरी रात

तीसरी रात की बातें बतलाते हुये मिश्राजी ने कहा - रमा तीसरी रात को मैंने जो कुछ देखा वह तो मुझे भी बहुत अजीब लगा. उस रात मैंने देखा कि कुछ लोग मेरी कुछ व्यक्तियों के साथ संबंध को लेकर तरह तरह की बातें करते हुये मुझ पर आरोप लगा रहे हैं कि वह देखो मिश्राजी जो अपने आपको बड़ा गुणी और ज्ञानवान व्यक्ति मानता है कैसे कैसे लोगो की संगति में उठता बैठता है. सच कहूं रमा लोगों की इन बातों को सुनकर मुझे तुरंत कर्ण की बात याद आने लगी. तुम तो जानती हो कि किस तरह सार्वजनिक सभा में कर्ण का अपमान हुआ और उस अपमान से कर्ण को जितनी पीड़ा हुई होगी उससे ज्यादा पीड़ा का प्रदर्शन करते हुये दुर्योधन ने कर्ण को सम्मानित करते हुये अंग देश का राजा बना दिया. चारों तरफ से अपमान और व्यंग्य के भंवर में घिरे कर्ण के लिये दुर्योधन व्दारा दिया गया यह सम्मान अमृत समान था और उसी दिन से कर्ण अपने को पूर्ण रूपेण दुर्योधन को समर्पित कर दिया.

मिश्राजी को थोड़ी देर शांत रहने का ईशारा करके रमा बोली - मिश्राजी थोड़ा सांस भी ले लिया करो. आप बोलना शुरू करते हैं तब फिर रूकने का नाम ही नहीं लेते. ऐसे में कई महत्वपूर्ण बातें सुनने के बाद भूल जाती हूं और आपसे प्रश्न भी नहीं कर पाती. कम से कम थोड़ी थोड़ी देर में मुझे प्रश्न करने का मौका तो दिया करें. तभी तो मैं आपकी समस्या को सही ढंग से समझकर कोई काम का सुझाव दे पाऊंगी. रमा की यह बातें मिश्राजी को बहुत अच्छा लगा और आश्वासन देते हुये बोला. बिल्कुल रमा - अब से न केवल तुम्हें प्रश्न करने का अवसर ही दूंगा बल्कि

बीच बीच में मैं खुद याद दिला दूंगा कि रमा तुम्हारे मन में कोई प्रश्न हो तो पूछ लो.

रमा बोली - मिश्रा जी आप जिसे अजीब बात कह रहे हैं वह मुझे तो अजीब नहीं बल्कि सामान्य बात ही लग रही है. अब आप ही बतलाईये कि हर समाज में संबंधों का एक मापदंड होता है और उस मापदंड के ऊपर या नीचे जाने पर चर्चा होना स्वाभाविक है. आप अपने ही बात को ले लीजिये. आपके पदधारित व्यक्ति का अपने कार्य क्षेत्र में एक विशेष स्थान होता है और जब तक आप अपने उस विशेष स्थान के अनुरूप कार्य व्यवहार व आचरण करते रहेंगेए तब तक किसी का ध्यान आपकी ओर नहीं जायेगा. लेकिन जैसे ही आप इससे ऊपर या नीचे गये तो वहीं से चर्चा शुरू हो जायेगी. आपने अभी अपने ऊपर लगने वाले जिस आरोप के संबंध में बतलाना शुरू किये थे उसका कारण आपका गलत लोगों के साथ संबंध का रखना था. जैसे कर्ण में जैसा गुण थाए उसके अनुसार लोगों में उसकी विशेष स्थान बन गई थीए जो कि दुर्योधन के संबंध में बने स्थान से विपरीत थी. अब ऐसी स्थिति में कर्ण का दुर्योधन की ओर सम्मिलित हो जानाए चर्चा या आरोप का विषय बनता ही बनता. इसमें अजीब क्या है मिश्राजी ?

रमा को जवाब देते हुये मिश्राजी बोले - इसे मैंने अजीब इस कारण कहा कि किसी के साथ संबंध स्थापित करना व्यैक्तिक और स्वैच्छिक होता है. इसलिये व्यक्ति का एक दूसरे के साथ संबंधों पर किसी को आरोप या गलत साबित करने की कोशिश नहीं किया जाना चाहिये. कुछ लोग मुझे किन्हीं कारणों से पसंद आया और मेरा उनसे मित्रता का संबंध स्थापित हो गया. इसमें किसी को आपत्ति क्यों होनी चाहिये.

रमा मुस्कराकर बोली - वाह मिश्राजी. एक तरफ तो आप संबंधों के लिये वैयक्तिक और स्वैच्छिक का तर्क दे रहे हैं और दूसरी ओर दूसरे लोगों की इसी वैयक्तिक और स्वैच्छिक का विरोध कर रहे हैं. फिर आप यह भी सोचिये न की कोई भी किसी की यूं ही आलोचना नहीं कर देते. उसके पीछे भी अपना एक तर्क और सिध्दांत होता है. अब आप कर्ण को ही ले लीजिये. ठीक है उसके साथ अन्याय हुआ था. पर उसका यह मतलब तो नहीं हुआ न कि उन्हें दूसरों पर अन्याय करने या अन्याय का साथ देने का अधिकार मिल गया. कर्ण ने केवल इस कारण की दुर्योधन ने भरे समाज में उसे अंग देश का राजा बनाकर सम्मान दिया, उसका हर गलत काम में सहयोग किया. इसे भी तो सही नहीं कह सकते न और फिर अगर इस आधार पर कर्ण की आलोचना होती है तो आलोचना करने वाले गलत कैसे हो गये. उसी प्रकार अगर आपका संबंध अपने संकुल के गलत लोगों से है और इस कारण अन्य लोग आपकी आलोचना करते हैं तो लोग कैसे गलत हो गये. कर्ण के पास अपनी संगति सुधारने का कोई अवसर या ईच्छा भले से न रहा हो पर आपके पास तो अपनी संगती सुधारने का अवसर और ईच्छा दोनों होनी चाहिये और अगर नहीं भी है तो उत्पन्न कीजिये तब आपको सम्मान मिलेगा अन्यथा नहीं.

मिश्रा जी बोले - अहसान को भुलाया भी तो नहीं जा सकता रमा. जिन लोगों की संगति के कारण लोग मुझ पर ताने कसते हैं, उन्हें क्या पता कि मैं किन किन अहसानों के नीचे दबा हूं और केवल इस कारण की लोग मेरी आलोचना कर रहे हैंए उनका साथ छोड़ दूं यह भी तो उचित नहीं होगा. रमा आज मैं तुमको बतला रहा हूं कि कई बार मुझे अपने कार्य क्षेत्र में मुसीबतों का सामना करना पड़ा है. उस समय ये ताने मारने वाले मेरे साथ खड़े होने को भी तैयार नहीं थे. ऐसी परिस्थिति में उन्होंने मेरा साथ दिया है तो भला मैं उन्हें कैसे छोड़ सकता हूं.

रमा बोली - देखो मिश्राजी आपके जैसे प्रबुध्द के मुंह से ऐसी बात शोभा नहीं देती. आप क्या समझते हैं कि दुर्योधन ने कर्ण को ऐसे ही प्रेम आवेश में आकर अंग देश का राजा बना दिया था. बिल्कुल नहीं. दुर्योधन को कर्ण की शक्ति के बारे में पता थी और वह चाहता था कि किसी भी स्थिति में कर्ण उसके पक्ष में आ जाये. सभा में कर्ण के अपमान ने दुर्योधन को सुनहरा अवसर प्रदान किया और कर्ण पूरे उम्र भर के लिये दुर्योधन का होकर रह गया. इसी प्रकार आप जिसे अपना हितैषी मान कर चल रहे हैंए उन्होंने भी आपके शक्ति को जानकर ही आपका सहयोग किया और ऐसा करते समय उनके मन में यह बात भी रही की वे लोग कैसे और कहां आपका उपयोग करेंगे. रमा के बोलने के बाद मिश्राजी ने कहना शुरू किया. दूसरे व्यक्ति के लिये दूसरे व्यक्ति की परिस्थिति या मनोभावों का विश्लेषण करना सरल होता है रमा और मैं इसे सरल होना इस कारण कह रहा हूं कि यह विश्लेषण वास्तविकता से कोसो दूर होता है. पर यह जो अहसानों की जंजीर होती है न वह बहुत मजबूत होती है. अरे जिस अहसान की जंजीर को कर्ण जैसे महारथी नहीं तोड़ पाया उसे मुझसे तोड़ने की तुम आशा कर रही हो. रमा क्या तुम मेरे साथ अन्याय नहीं कर रही हो ?

मिश्राजी की यह बात रमा को ऐसा लगा जैसे मिश्राजी न बोलकर कोई राह चलता व्यक्ति बोल रहा हो. पहले तो उसे आश्चर्य हुआ कि मिश्राजी जैसे सुलझे हुये व्यक्ति भी कभी इतना बड़ा कुतर्क कर सकता है. पर मन में यह विचार करके की जिसे हम पहले से ही यह मान बैठे की यह तो अटूट है इसे तोड़ा ही नहीं जा सकता तो फिर मन भी उसे तोड़ने का प्रयास नहीं करता और लोग यथास्थितिवादी बनते चले जाते हैं जिसे दूसरे शब्दों में गुलाम या गुलामी की मानसिकता कहते हैं. लेनिक मैं ऐसा नहीं होने दूंगी. मिश्राजी को गुलामी की मानसिकता से मुक्त करके

रहूंगी. यह सोचते हुये रमा बोली. मिश्राजी कौन कहता है कि एहासान को भुला दिया जाना चाहिये. अहसान हमेशा याद भी रखा जाना चाहिये और अवसर मिले तो उसे चुकाया भी जाना चाहिये. मगर अहसान चुकाने का तात्पर्य यह बिल्कुल नहीं होना चाहिये कि हम बड़े से बड़े गलत काम या अन्याय में केवल इस कारण उस व्यक्ति के साथ खड़े हो जाये कि उनका हम पर कोई अहसान है. ऐसा बिल्कुल नहीं होना चाहिये. और यही गलती कर्ण ने दुर्योधन का साथ देकर किया और आप भी अपने संकुल के गलत लोगों का साथ देकर कर रहे हैं.

मिश्राजी रमा से कहा - रमा तुम फिर स्थिति का सरल विश्लेषण कर रही हो. अरे यह तो बतलाओ कि जो व्यक्ति किसी के अहसान में दबा हो वह उससे कैसे बोल सकता है कि मैं आपको साथ नहीं दूंगा. यह तो स्थापित व्यवहारों और मूल्यों के विपरीत बात होगी न. रमा बोली - वाह मिश्राजी अहसान न चुकाना स्थापित व्यवहारों और मूल्यों के विपरीत हो जायेगी लेकिन अन्याय का साथ देना और अन्यायी के साथ खड़े रहना स्थापित व्यवहार और मूल्यों के अनुसार होगी. रमा यह नहीं समझ पा रही थी कि मिश्राजी ये कैसी बातें कर रहे हैं. पर उन्हें लगा कि जिस तरह कर्ण ने सब कुछ जानते और समझते हुये भी अहसान चुकाने के लिये अपने को दुर्योधन के प्रति समर्पित कर दिया था उसी तरह मिश्राजी भी अपने संकुल के कुछ दुर्योधनों के अहसान चुकाने के लिये अपने आपको समर्पित कर दिया है. लेकिन रमा के लिये यह भी जरूरी था कि मिश्राजी को दुर्योधनों के चंगुल से निकाला जाये. अतः अपनी बात सशक्त तर्क के साथ रखती हुई बोली. मिश्राजी अहसान चुकाने का अर्थ यह नहीं होता कि उसके लिये सभी गलत बातों का समर्थन करें. जैसे कर्ण ने किया और आप भी करने जा रहे हैं. अहसान चुकाना वहीं तक सही है, जहां तक उससे किसी निर्देश को कोई हानि न पहुंचे. रमा की

बातें सुनकर मिश्राजी को लगने लगा था कि वह अब तक गलत तर्कों का सहारा लेकर बहस कर रहा था और वह अब स्वयं इस दुष्चक्र से छुटकारा पाना चाह रहा था. अपने मन की ईच्छा प्रकट करते हुये मिश्राजी बोले. रमा दुष्चक्र में फंसा व्यक्ति क्या जल्दी से मुक्त हो सकता है और ऐसा होना क्या कोई सरल बात होगी ?

यह देखकर कि मिश्राजी के मन में रास्ता बदलने की चाहत है, रमा को प्रसन्नता हुई. और वह चाहती भी यही थी कि मिश्राजी कभी भी किसी अन्याय के साथ खड़ा हुआ दिखाई न दें. अतः प्रसन्नता के साथ ही बोली. मिश्राजी कोई भी काम सरल या कठिन नहीं होता. काम की सरलता और कठिन विचारों पर निर्भर करता है. अगर आप किसी काम को सरल समझ लें तो वह सरल नहीं होते हुये भी सरल हो जाता है और अगर किसी काम को कठिन समझ लिया जाये तो वह कठिन न होते हुये भी कठिन हो जाता है. इस कारण जब आप मन में यह सोंच लेंगे कि मुझे दुर्योधनों से मुक्त होना है आप उसी क्षण से मुक्त होते जायेंगे. आप कर्ण की बातें याद करिये ऐसा कौन नहीं था जो कर्ण को न समझाया हो. अरे लोगो की तो बात छोड़िये स्वयं भगवान श्रीकृष्ण और उनकी अंतर्रात्मा भी कर्ण को अहसास दिला चुके थे कि इस तरह दुर्योधन का साथ देना उनके जैसे महापुरूष को शोभा नहीं देता. लेकिन कर्ण ने किसी का नहीं सुना और दरअसल उन्होंने सुनना ही नहीं चाहा. और इसका परिणाम क्या हुआ आप जानते ही हैं मिश्राजी.

रमा की बातों में मिश्राजी को मधुरस की मिठास का आभास हो रहा था. मिश्राजी मन ही मन सोंच रहा था कि रमा कितना सुंदर बोल लेती है और न केवल बोल लेती है बल्कि अपनी बातों को इतने सलीके से रखती है कि सामने वाला न चाहते

हुये भी उसकी बातों से सहमत हो जाये. रमा जब पहले बोली की मिश्राजी आपको अन्यायी लोगों का साथ छोड़ना पड़ेगा तब उसे लगा था कि वह रमा को अपने बातों में उलझा लेगाए लेकिन अंत में हुआ इसका विपरीत और वह खुद ही रमा की बातों में उलझकर अन्यायी लोगों का साथ छोड़ने के लिये तैयार हो गया. मिश्राजी यह भी सोंच रहा था कि अगर रमा की बातों में मिठास नहीं होती तब वह उसकी इतनी लंबी चैड़ी बातों को सुनता भी नहीं. मन में प्रसन्नता का भाव लिये मिश्राजी बोले. रमा अभी तूम जितनी भी बात बोली सभी मुझे अच्छा लगा. लेकिन इसके साथ ही यह भी बतलाओं कि अगर हम अन्यायी का साथ छोड़ना चाहें और उस दिशा में प्रयास भी करना शुरू कर दें लेकिन अन्यायी हमारा साथ छोड़ने को तैयार न होंए वह हमें बार बार अपनी ओर आने कें लिये आकर्षित करें, उस स्थिति में हमें क्या करना चाहिये.

रमा बोली - मिश्राजी आपने बहुत सुंदर प्रश्न किया है और आपका यह प्रश्न गलत संगति को छोड़ने का ईरादा भी दिखता है. मिश्राजी संबंध स्थापना के लिये दो छोर का होना आवश्यक है और दो छोरों में से कोई भी एक छोर न हो तो संबंध बन ही नहीं सकता. जैसे अभी आपने पूछा कि मैं छोड़ना चाह रहा हूं और वह छोड़ना नहीं चाह रहा है. तब क्या होगा. इसका जवाब भी आपके प्रश्नो में ही निहित है. अभी तक आपने यह नहीं कहा कि आपने छोड़ दियाए इसका कारण संबंध के लिये आवश्यक दोनों छोर अभी तक विद्मान है. जैसे ही आप बोलेंगे या मन में निश्चय करेंगे कि मैंने छोड़ दियाए उसी समय एक छोर गायब हो जायेगा और फिर दूसरा छोर भी धीरे धीरे अदृष्य हो जायेगा.

रमा का जवाब सुनकर मिश्राजी के मन में तीसरे रात की घटना से संबंधित मन को विचलित करने वाली जितनी भी बातें थी, वह गायब हो गई. मिश्राजी को यह आभास होने लगा कि उसके सिर से एक बहुत बड़ा बोझ सदैव के लिये खतम हो गया. उसने रमा को धन्यवाद देते हुये कहा. रमा अब मुझे अहसास हुआ है कि मेरे जैसे पद धारित व्यक्तियों की जितनी भी आलोचना होती रही है उन सबके लिये कहीं न कहीं हम खुद जिम्मेदार रहे हैं. परिस्थिति का एकतरफा विश्लेषण करके सदैव दूसरों को जिम्मेदार ठहराये. यहां तक की कभी कभी दूसरों पर दोशारोपण भी किये कि उन्हें दूसरों के सम्मान करने का तरीका या संस्कार मालूम नहीं है. जबकि वास्तविकता यह है कि अपने सम्मान के लिये सौ प्रतिशत केवल हम ही जिम्मेदार हैं.

रमा बोली - हां मिश्राजी. सम्मान एक तरह से हमारे लिये दर्पण के समान है, जिसमें हमारे कार्यों की छवि दिखती है. अच्छा कार्य करने से छवि अच्छी बनेगी और सम्मान बढ़ेगी वहीं गलत कार्यों से गलत छवि बनेगी और सम्मान भी घटेगी.

मिश्रा जी बोले - तो रमा तुम निश्कर्ष रूप में यह कहना चाहती हो कि मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति को यह दर्पण हमेशा अपने पास रखना चाहिये. रमा - हां मिश्राजी. बिल्कुल यहीं कहना चाह रही हूं और इसके बाद भी अगर आपके जैसा पदधारित व्यक्ति इसकी अवहेलना करेंगे तब जानते हो न क्या होगा ?

मिश्राजी - जानता तो हूं रमा. पर तुम अपने मुंह से बोलो. सुनने में अच्छा लगता है. रमा हंसते हुये बोली. फिर क्या बोलता रहेगा. हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं.

चौथी रात

चौथी रात की घटना का विवरण देते हुये मिश्राजी ने कहा - रमा तुम्हें वो घटना तो याद है न जब स्वयंवर सभा में एक बार पुनः कर्ण का अपमान हुआ था. इस घटना ने तो मुझे यह सोंचने पर विवश कर दिया कि जैसे एक दो लोग नहीं पूरी की पूरी सृष्टि ही कर्ण के अपमान करने पर तुल गई हो. अरे राजा द्रुपद ने द्रोपदी की स्वयंवर की घोषणा करते समय यह थोड़ी कहा था कि इसमें कर्ण को नहीं आना है और जब कर्ण वहां अन्य राजाओं के साथ आ ही गया थाए तो उन्हें स्वयंवर की शर्तों के अनुरूप प्रतियोगिता में भाग लेने का अधिकार मिलना चाहिये था. मैं कह रहा हूं कि अगर कर्ण को उस प्रतियोगिता में भाग लेने का अवसर मिला होता तो इतिहास कुछ दूसरा ही होता.

अपने पति की बातों को सुनकर रमा बोली. हम सभी मनुष्यों की प्रवृत्ति कितनी विचित्र होती है न मिश्राजी. हमारे पास जो कुछ होता है हम उसकी बात नहीं करते. हां जो नहीं होता उसकी बात जरूर करेंगे और ओ भी एक बार, दो बार नहीं बल्कि बार-बार. जैसे अभी आप कह रहे हैं. अरे ऐसा हो गया होता तो वैसा हो जाता, वैसा होता तो ऐसा हो जाता ऐसी बातों का क्या तुक है मिश्राजी. भाई यह तो सर्वविदित है न कि उस प्रतियोगिता में कर्ण को भाग लेने का अवसर नहीं दिया गया और द्रोपदी को अर्जुन ने जीत लिया. अब इसमें किन्तु परन्तु निकालना तो कोई बुध्दिमानी नहीं है न और फिर जो हो गया सो हो गया. अब उसे न आप बदल सकते हैं और न मैं बदल सकती हूं. फिर इस बात से आपको कैसी पीड़ा ?

रमा की यह बातें मिश्राजी को अंदर तक चुभ गई थीं फिर भी अपने पीड़ा को दबाते हुये बोला. जिस प्रकार तुमने अभी अभी मनुष्यों की एक विचित्र प्रवृत्ति की बात की न रमा उसी प्रकार मनुष्यों की एक सामान्य प्रवृत्ति भी होती है जिसे सरल शब्दों में हम तुलना करना कहते हैं. मैं यह मानता हूं कि दो असमान या भिन्न भिन्न वस्तुओं व परिस्थितियों में तुलना करना नितांत मूर्खतापूर्ण कार्य कहा जा सकता है किन्तु दो लगभग समान वस्तुओं और परिस्थितियों में तुलना करना किसी भी दृष्टिकोण से मूर्खतापूर्ण कार्य या अप्रासंगिक नहीं कहा जा सकता और मेरी तुलना इसी दूसरे प्रकार को ध्यान में रखकर है. अरे तुम तो जानती हो न कर्ण और अर्जुन दोनों लगभग स्तर में समान थे और दोनों की परिस्थितियां भी समान थी.

मिश्रा जी के तर्को से रमा इतना तो अवष्य समझ गई थी कि इनके जैसे पदधारित व्यक्तियों के प्रतिस्पर्धा में इनके कार्य क्षेत्र में कोई न कोई अर्जुन है और जिन्हें कुछ लोगों या समूहों व्दारा इनके मुकाबले आगे किया जा रहा है जो इनकी पीड़ा का कारण बन रहा है. फिर भी अनजान बनते हुये मिश्राजी के ही मुंह से सुनने के उद्देश्य से रमा बोली. तो मिश्राजी कर्ण और अर्जुन की प्रतिस्पर्धा का आपके पीड़ा से क्या संबंध है और आपके संकुल का वह अर्जुन कौन है जिसे जानबूझकर आगे बढ़ाने का प्रयास किया जा रहा है ?

हवा का रूख अपने अनुकूल जानकर थोड़ी देर पहले रमा की बातों से हुई चुभन को भुलकर मिश्राजी बोले. रमा तुम तो जानती हो कि हर संकुल में मेरे जैसे पदधारित व्यक्तियों के साथ एक और व्यक्ति रखा गया हैए जिन्हें लोग "संकुल प्रभारी" के नाम से जानते हैं. मेरे जैसे सभी पदधारित व्यक्तियों के लिये ये संकुल प्रभारी

अर्जुन की तरह कार्य कर रहे हैं. कभी भी ऐसा कोई अवसर अपने हाथ से नहीं जाने देतेए जिसमें हम लोगों का अपमान हो. अरे अपमान करने के व्यक्तिगत तरीकों को तो एक बार नजर अंदाज भी कर दें. पर नहीं इतने से ही इनको कहां संतुष्टि मिलने वाली है. सो समुह में अपमानित करने के लिये कुछ लोगों को अपने साथ मिलाकर समुह भी बना लेते हैं. इसी का परिणाम होता है कि मैं कुछ दूसरा कहता हूं और ये कुछ दूसरा कहते हैं. आधे लोग मेरे जैसे कहे अनुसार काम करते हैं तो आधे लोग इनके कहे अनुसार. इससे काम इतना ज्यादा प्रभावित हो जाता है कि मेरे जैसे पदधारित व्यक्तियों को हंसी व अपमान का पात्र बनना पड़ता है. तो क्या मेरी इन सारी बातों से तुम्हें यह नहीं लगता रमा कि मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति को जानबूझकर अपमानित करने का प्रयास किया जाता है.

मिश्राजी को उत्तर देते हुये रमा बोली. मिश्राजी अब आप इसे थोड़ी देर के लिये प्रतिस्पर्धा की नजर से नहीं बल्कि नियंत्रण और संतुलन की नजर से देखने का प्रयास करिये. चलिये मैं आपको आपके व्दारा ही आरंभ की गई बातों से समझाने का प्रयास करती हूं. मान लो अर्जुन और कर्ण एक दूसरे के समय नहीं हुये होते अर्थात् जिस समय अर्जुन हुआ था उस समय कर्ण नहीं होता या फिर जिस समय कर्ण हुआ था उस समय अर्जुन नहीं होता. तब क्या होताघ् तब यहीं होता ? मिश्राजी कि दोनों अपने - अपने समय में निरंकुश होते. उन्हें किसी का डर नहीं होता. इसलिये ईश्वर ने नियंत्रण और संतुलन के लिये ही दोनों शक्तिशाली योध्दाओं को एक समय में ही जन्म दिया. अरे भले से सामान्य बुध्दि से सोचने पर हम सबको यही लगता है कि अर्जुन का साथ देने वाला स्वयं भगवान कृष्ण था तो उन्हें कर्ण या फिर किसी अन्य से डरने की जरूरत ही क्या. उसी प्रकार कर्ण के साथ उसका जन्मजात कवच और कुण्डल के अतिरिक्त आत्मविश्वास था

तो फिर उसे भी अर्जुन या अन्य से डरने की क्या जरूरत थी. लेकिन जब आप इन दोनों पात्रों के चरित्र का विश्लेषण करेंगे तब पायेंगे कि सब कुछ जानते और समझते हुये भी दोनों को डर था तो केवल एक दूसरे से. इसी को नियंत्रण और संतुलन कहा जाता है. वैसे ही आप अपने पदधारित व्यक्तियों के संदर्भ में सोंचकर देखिये कि अगर केवल आपके पदधारित व्यक्ति ही रहता या फिर केवल संकुल प्रभारी ही रहते तो क्या आप दोनों में से दोनों की ही निरंकुश होने की संभावना नहीं बढ़ जाती. इसी कारण नियंत्रण और संतुलन के प्राकृतिक सिध्दांत के आधार पर प्रत्येक संकुल में संकुल प्रभारी का पद बनाया गया.

रमा व्दारा दिये गये जवाब सुनने के बाद अपने मन में शेष रह गये शंका को दूर करने के लिये मिश्राजी ने पुनः प्रश्न किया. ठीक है रमा तुम कह रही हो तो मैं इसे नियंत्रण और संतुलन मान लेता हूं. पर क्या अपमानित करने का प्रयास भी इस सिध्दांत में शामिल है.

हल्का सा मुस्कराते हुये रमा बोली - मिश्राजी इस सिध्दांत को आपने कब माना. अरे.अरे मैं गलत कह रही हूं. अभी आपने माना कहां है. माना हुआ तो उस दिन कहलायेगा न जिस दिन से आप इस सिध्दांत को ध्यान में रखकर कार्य और व्यवहार करना शुरू करेंगे. अभी तो केवल आपने सुना है और उसमें आपको लगने लगा कि इस सिध्दांत से प्रतिस्पर्धा सहयोग में बदल सकती है. बस अभी तक जैसे आपको हर चीज में प्रतिस्पर्धा नजर आती थी वैसे ही संकुल प्रभारियों को भी नजर आ रही होगी. जिस दिन उन्हें कोई इस सिध्दांत को बतलाने व समझाने वाला मिल जायेगाए उस दिन उनके मन से भी प्रतिस्पर्धा की भावना निकल जायेगी और सहयोग की भावना आ जायेगी और फिर जब प्रतिस्पर्धा ही नहीं रहेगी

तब अपमान का तो प्रश्न ही नही है. एक बात जरूर याद रखिये मिश्राजी जहां प्रतिस्पर्धा होगी वहां अपमान एक दूसरे को नीचा दिखाने की होड़, एक दूसरे का टांग खींचना, नुकसान पहुंचाना यह सभी बातें रहेंगी ही रहेंगी. आपको अर्जुन और कर्ण के संबंधों में जितनी भी कड़ुवाहट महाभारत में देखने-सुनने को मिली है, उन सबका प्रमुख कारण दोनों के मन में एक दूसरे के लिये रहने वाली प्रतिस्पर्धा की भावना ही थी और इसी कारण उन दोनों के व्दारा जब कोई कार्य किये जाते तब दोनों को ही यह लगता कि एक ने दूसरे का अपमान किया है. रमा की सारगर्भित बातों से मिश्राजी के मन में छाया धुंध बहुत हद तक छंट गया. मिश्राजी बिना बोले कुछ देर तक अपने बिस्तर पर बैठे-बैठे सोंचता रहा कि कैसे दृष्टिकोण में थोड़ा परिवर्तन कर देने मात्र से धारणा एकदम बदल जाती है और धारणा से संबंध गहरे रूप में जुड़ा होता है. फिर मनुष्य क्यों चीजों के एक पहलू को ही देखना चाहता है ? क्या वह खुद से ऐसा करता है या फिर कोई उसे ऐसा करने के लिये उकसाता हैए जिसके वशीभूत होकर वह दूसरे पहलू की ओर देखना ही नहीं चाहता. मिश्राजी ख्यालों में डूबा विचार कर रहा था कि उसे रमा की आवाज सुनाई दी और चौंकते हुये रमा से पूछा. ऊं रमा तुम कुछ बोली क्या ?

रमा - हां मिश्राजी. मैं यह पूछ रही थी कि किस सोच में पड़ गये ?

मिश्राजी - रमा मैं सोंच रहा था कि अगर कोई व्यक्ति अपना दृष्टिकोण बदलना चाहे और किसी दूसरे के कारण न बदल सके या इसे ऐसा समझ लो कि कोई दूसरा उसे अपना दृष्टिकोण बदलने न देए तब तो फिर वह प्रतिस्पर्धा की मानसिकता से मुक्त ही नहीं हो पायेगा.

रमा - हां मिश्राजी आप सही कह रहे है. कर्ण के पूरे जीवन में ऐसा कई अवसर आए जिसमें उन्होंने दूसरे पहलू को भी देखने का प्रयास किया और जिस समय

वह ऐसा करता था उस समय उसे अर्जुन में अपना प्रतिस्पर्धी नहीं बल्कि भाई दिखाई देता था. अब इसे आप विधि का विधान कहिये या फिर कुछ और दुर्योधन, दुःशासन और शकुनि के कारण कर्ण कभी भी दूसरे पहलू पर ज्यादा देर तक नहीं टिक पाता था. मिश्राजी इतना तो तय है कि अगर कोई इंसान चीजों के दोनों पहलू को देखना चाहता है तब उसे दुर्योधन दुःशासन और शकुनि जैसे गलत लोगों के व्दारा बनाये या फैलाये गये मायाजाल से अपने को दूर रखना होगा.

मिश्रा जी - हां रमा यह सच है कि कर्ण को चारों ओर से घेरे हुये दुष्टों ने उसे दूसरे पहलू पर टिकने नहीं दिया पर फिर भी मुझे अब दुख इस बात के कारण हो रहा है कि अर्जुन तो सदा सज्जनों की संगति में रहने वाला था. अरे दूसरों की बात क्यों करें वह तो स्वयं त्रिलोकीनाथ के आश्रय में रहने वाला थाए फिर भी उन्हें यह ज्ञान नहीं मिला कि वे कर्ण के व्यक्तित्व के दूसरे पहलू को देख सके.

रमा - हां मिश्राजी यह बात तो है. इसी कारण मैं कहना यह चाह रही हूं कि अगर हम इतिहास की बातों पर ही टिका रहना चाहेंगे तो हमारे पास अफसोस और दुख व्यक्त करने के अलावा और कोई विकल्प नहीं बचेगा. इतिहास में ऐसे कई अवसर आते हैं जब मन यह कह उठता है कि काश. ऐसा होता या काश ऐसा नहीं होता. पर उससे स्थिति तो नहीं बदलती न. हां हम इतिहास से यह जरूर सीखें कि हमारे आने वाले जीवन में कभी यह अवसर न आये कि हमें कहना पड़े कि काश. ऐसा होता या काश ऐसा न होता.

मिश्राजी - हां रमा तुमने सार रूप में सब कुछ कह दी.

रमा - क्या मिश्राजी ?

मिश्राजी - यही रमा कि मेरे जैसे पदधारित सभी व्यक्तियों को अपने संकुल के किसी भी व्यक्ति चाहे वह संकुल प्रभारी हो या अन्य शिक्षकगण में अर्जुन का प्रतिबिंब नहीं देखना है और यह तभी संभव होगा जब हम चीजों के दूसरे पहलू पर भी ध्यान देना सीखेंगे.

रमा - और अगर ऐसा नहीं हो सकता तब ?

मिश्राजी - तब क्या रमा ? सब की स्थिति मेरे जैसी हो जायेगी.

रमा - आपके जैसी हो जायेगी. मैं समझी नहीं मिश्राजी कैसी आपके जैसी हो जायेगी. मिश्राजी यह जानकर कि रमा जानबूझकर प्रश्न पर प्रश्न कर रही है हंसकर बोले. क्या रमा जानती हो फिर भी पूछ रही हो. अरे वही भाई रात में बड़बड़ाने वाली और क्या ?

रमा भी मुस्कुराकर बोली - मिश्राजी एक बार बोलकर बतला दो. तब समझ में आयेगी कि कैसी स्थिति हो जायेगी ?

मिश्राजी हंसते हुये ही बोले - नही रमा. यह तो अब तुम्हारे मुंह से ही सुनना अच्छा लगता है तुम्ही बोल के बतला दो.

रमा - वाह मिश्राजी. आप तो ऐसे बोल रहे हैं जैसे मेरे बोले बिना आपको पांचवी रात की बात ही याद नहीं आयेगी.

मिश्राजी - सच कह रही हो रमा ऐसा हो भी सकता है कि मैं पांचवी रात की बात बतलाना शुरू करूं और बीच में भुल जाऊं. तुम खुद अनुभव की होगी कि जैसे जैसे

तुमने ज्यादा बोलना शुरू की वैसे-वैसे मैं तुमसे ज्यादा प्रश्न करते गया और इससे मेरे मन की पीड़ा भी कम होती गई.

रमा - ठीक है मिश्राजी. बोलने के पहले एक बार और कह देती हूं कि प्रतिस्पर्धा नहीं सहयोगी बनो या दूसरे पहलू पर भी ध्यान देने की कोशिश करो और अपने चारों ओर से बुरे लोगो को जितना हो सके दूर रखो अन्यथा बार-बार कहते रहोगे. हां, हां, हां मैं सूर्यपुत्र हूं.

पांचवी रात

पांचवी रात की घटना सुनाते हुये मिश्राजी ने कहा - रमा उस रात मैंने देखा कि कर्ण और भीष्म पितामह दोनों एक कमरे में एक दूसरे के विपरीत मुंह करके खड़े हुये हैं. कुछ देर तक दोनों अपने अपने स्थान पर शांत खड़े रहे फिर भीष्म पितामह ने दुख से भरे स्वर में कर्ण से कहा. कर्ण मेरी तो विवशता है कि सब कुछ जानते और समझते हुये भी मैं इस अन्यायी दुर्योधन के साथ खड़ा हुआ हूं पर तुम मेरे जैसे किसी विवशता से बांधे हुये नहीं हो फिर क्यों इस अन्यायी के पक्ष में अपने को खड़े कर लिये होघ्

भीष्म पितामह की बातें सुनने के बाद कर्ण वैसे ही विपरीत दिशा में देखते हुये बोले. पितामह मैं भी आपकी तरह ही विवश हूं. फर्क इतना है कि आपकी विवशता अपने पिता को दिये वचनों के कारण किसी व्यक्ति विशेष के प्रति न होकर राज सिंहासन के प्रति है और मेरी विवशता किसी अन्य को दिये वचनों के कारण नहींए बल्कि स्वयं को दिये वचनों के कारण केवल दुर्योधन के प्रति है. इस तरह आज हम दोनों की स्थिति एक जैसी ही है पितामह. जिस तरह राज सिंहासन के प्रतीक के रूप में आप दुर्योधन से अलग नहीं हो सकते उसी तरह मेरी वचनों के प्रतीक के रूप में दुर्योधन मेरे सामने खड़ा है और उसे मैं छोड़कर नहीं जा सकता.

कर्ण की बातें सुनकर भीष्म पितामह और ज्यादा दुखी होते हुये कहता है. कर्ण कर्ण कर्ण आखिर तुम मेरी बात समझने की कोशिश क्यों नहीं कर रहे हो. कल आने वाली पीढ़ी मेरी विवशता को समझते हुये कदाचित मुझे क्षमा भी कर दे, पर

तुम्हें शायद ही क्षमा करें. कर्ण मैं तुम्हारी गुणों को जानता और पहचानता हूं. इसी कारण मैं यह बिल्कुल ही नहीं चाहूंगा कि लोगों के मन में तुम्हारे जैसे व्यक्तित्व के लिये कोई दुर्भावना या निरादर हो. रमा भीष्म पितामह के इस बात का कर्ण ने क्या जवाब दिया यह मुझे नहीं मालूम क्योंकि इसके तुरंत बाद ही मेरी नींद खुल गई थी. पर नींद खुलने के बाद मुझे ऐसा लगा कि हर संकुल में मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति आज भी कर्ण और कुछ लोग भीष्म पितामह की भूमिका में खड़े हुये हैं और यह जानते हुये भी कि उनके व्दारा जिन लोगों का साथ दिया जा रहा हैं वे गलत हैं फिर भी अपनी अपनी परिस्थिति की विवशता के अनुसार ऐसे लोगों को छोड़ने की हिम्मत नहीं दिखा पा रहे हैं.

इतना बोलने में मिश्राजी को लगभग 5-7 मिनट का समय लग गया था. रमा भी सोंची कि मिश्राजी के मन में जितनी भी बातें हैं पहले उन्हें निकलने दिया जाये. उसके बाद ही बोलना उचित होगा क्योंकि बात को बीच में रोककर या टोककर पूछने से कई बार बोलने वाले की प्रवाह भंग हो जाता है और ऐसी स्थिति में बोलने वाले के मन से बहुत सी आवश्यक बातें भी निकल नहीं पाती. अतः मिश्राजी के पूरा बोल लेने के बाद ही रमा ने बोलना आरंभ की. मिश्राजी आपने पांचवी रात में जो कुछ देखा सचमुच वह हमारे सभी की जीवन की सच्चाई है जिससे हम मुंह नहीं फेर सकते. हममें से अनेक लोग एक ही परिप्रेक्ष्य में गलती करते रहते हैं और साथ में यह भी चाहते रहते हैं कि जो गलती की जा रही है वह गलती सामने वाला न करें क्योंकि गलती करने का उसका आधार उससे कमजोर है. जैसे यही बात आपके सपने के संदर्भ में भी कही जा सकती है. भीष्म पितामह और कर्ण दोनों के व्दारा एक ही प्रकार की गलती की जा रही थीए पर उन दोनों में से कोई यह नहीं चाहता था कि गलती उन दोनों के व्दारा साथ साथ किया

जाये. इसी कारण दोनों ने एक दूसरे को दुर्योधन का साथ छोड़कर अलग हो जाने की बात इस आधार पर कही कि उनका आधार सामने वाले से कमजोर है यह तो वही बात हुई न मिश्राजी कि तुम छोड़ोगे तो यश मिलेगा और मै छोड़ूंगा तब अपयश. यही बात आपके जैसे पदधारित व्यक्ति और आप अपने विभाग के जिसे पितामह समझते हैं उनके ऊपर भी चरितार्थ होती है. दोनों के व्दारा ही अपनी अपनी प्रतिबध्दताओं और आवश्यकताओं के आधार पर गलत लोगों का पालन पोषण किया जाता है और साथ में यह भी चाहते रहते हैं कि सामने वाला वहीं गलती न करें. ऐसे में दोष तो दोनों के ऊपर ही लगता है और मान सम्मान में कमी भी दोनों की ही होती है.

रमा की बात सुनकर मिश्राजी बोले - पर रमा मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति तो एक छोटा सा व्यक्ति होता है जिसे अपने कार्यक्षेत्र में काम करने के लिये हर प्रकार के लोगों की समर्थन व सहयोग की आवश्यकता होती है. फिर हम लोग सीधे सभी लोगों से जुड़े होते हैं. ऐसे में किसी का साथ यह कहकर छोड़ देना कि वे अच्छे नहीं है एक दूसरे प्रकार के तनाव और अशांति को जम्न देने वाला हो सकता है. पर वे लोग जिन्हें तुम भीष्म पितामह कह रही हो उनका संबंध ऐसे लोगों से सीधा सीधा नहीं होता. फिर उनकी इस प्रकार की विवशता समझ में नहीं आती. ऐसे लोगों से उनका संबंध देखकर हमारे जैसे पदधारित व्यक्ति के मन में भी यही बात आती है कि जब उनको अपयश नहीं तो मुझे क्यों ?

मिश्राजी आप एक प्रकार से सहीं कह रहे हैं. रमा उत्तर देते हुये बोली और इसे मैं पहले स्पष्ट भी कर चुकी हूं. पर इस दिशा में तो सोंचनी ही पड़ेगी न की कहीं से भी हो शुरूआत तो हो. जब तक चाहे आधार कुछ भी हो गलत का साथ देना नहीं

छोड़ेंगे तब तक नुकसान पर नुकसान ही होता रहेगा. अन्य प्रकार के नुकसानों की भरपाई तो समय के साथ साथ हो भी जाती है पर मान सम्मान में हुई नुकसान की पूर्ति करदे ऐसा समय ही नहीं बना है. गंगापुत्र भीष्म महाभारत का वह पात्र हैए जिसका सम्मान स्वयं भगवान करते थे, और ऐसे महापुरुष को अपने पिता को दिये वचनों के कारणगलत व्यक्ति का साथ देने पर इतनी शर्मिंदगी का सामना करना पड़ता था कि वह अपने आप से भी नजरें नहीं मिला पाता था. यही स्थिति कर्ण की भी थी. चाहे वह लाक्षागृह की घटना होए चाहे द्यूत क्रीड़ा चाहे द्रोपदी का चीर हरण या अभिमन्यु की हत्या ये सभी बातें भीष्म पितामह और कर्ण के सामने हुई थी और इन सभी बातों का उनके व्दारा प्रतिरोध केवल इस कारण नहीं किया गया था कि एक अपने पिता को दिये राज सिंहासन की सुरक्षा का वचन निभाते हुये गलत व्यक्ति का साथ देने को विवश था तो दूसरा अपने को सम्मान दिलाने वाले मित्र के उपकारों के प्रति ऋणी होने के कारण.

पर आज तो वह स्थिति नहीं है मिश्राजी! आज के भीष्म पितामह न तो अपने पिता को दिये किसी वचन से बंधे हुये है और न आपके जैसे पदधारित कर्ण सम्मान और मित्रता के किसी अहसान के बंधन से. अतः अगर सम्मान पाना है और आने वाले दिनों में भी इस सम्मान को यथास्थिति में बनाये रखना है तो दोनों चाहे वह अब के भीष्म पितामह हो या फिर कर्ण को बुरे लोगों का साथ देना छोड़ना होगा. मन में एक ही निश्चय हो कि बुरा का अर्थ हर देश काल और परिस्थिति में बुरा ही होता है. अन्यथा वह दिन भी आयेगी जब दूसरे तो बहुत दूर रहेंगेए खुद से भी नजरे नहीं मिला पायेंगे.

रमा की बातों को मन में मनन करते हुये मिश्राजी सोचने लगे सच में जब भी कोई हमें किसी बात के लिये टोकता हैए हम पर व्यंग्य करते हैं हंसते हैं या फिर हमारी आलोचना करते हैं तो बिना कुछ सोच विचार किये हम ऐसा करने वालों को तुरंत भला-बुरा कहना आरंभ कर देते है. कभी एक पल के लिये भी यह सोचने का प्रयास नहीं करते कि जब इतने सारे लोग हमारी आलोचना कर रहे हैं तो कुछ देर के लिये ही सही अपने अंदर झांककर देखूं तो सही की इसमें कितनी सच्चाई हैं. जिस दिन भी अगर हम ऐसा करना सीख गयेए उसी दिन से ही हमारे मन से तनाव और अशांति का जाना निश्चित हो जायेगा. इतने दिनों तक मैं अपने को कर्ण जैसा मानता रहा और प्रतिफल यह हुआ कि नींद में भी कर्ण का चरित्र मेरे अंदर छाया रहा. यह तो धन्य हो रमा का जिसने मुझे और ज्यादा इंतजार न करके नौंवे दिन ही झकझोर कर उठा दिया और मेरी स्थिति को समझने का प्रयास की. धीरे-धीरे ही सही जितना ज्यादा रमा से बात करते जाऊंगाए उतनी ही मन का संशय और पीड़ा भी दूर होती जायेगी.

मिश्राजी को शांत हुये लगभग पांच मिनट हो गया था. रमा भी मिश्राजी को देखकर बिना बोले सोचने लगी. जिज्ञासा शांत करने के लिये प्रश्न करना बहुत अच्छी बात है और प्रश्न तब तक करते रहना चाहिये जब तक जिज्ञासा पूर्ण रूप से शांत न हो जाये. पर उससे भी अच्छी बात यह है कि प्रश्न के जवाब में जो उत्तर मिले उसे भी चिंतन मनन करके परख लेना चाहिये. बिना चिन्तन मनन के प्रश्न पर प्रश्न करना न तो जिज्ञासा शांत करेगी और न ही अच्छे प्रश्नो को जन्म देगी और शायद मिश्राजी इस समय अब तक अपने प्रश्नो के जवाब में जो बातें सुना था उसे ही परखने का कार्य कर रहा है. अतः रमा ने मिश्राजी के चिंतन

मनन के बीच में बात कर व्यवधान डालना उचित नहीं समझी और मिश्राजी के ही तरफ से पहल का इंतजार करते बैठी रही.

इस बीच मिश्राजी भी काफी चिन्तन मनन कर लिया था. कमरे में व्याप्त शांति को तोड़ते हुये मिश्राजी ने कहा. रमा तुम्हारी बातों से मैं इतना तो समझ गया कि मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति के जीवन में जो भी दुख पीड़ा तनाव व अशांति हैए उसका मूल कारण हमारे कार्य-व्यवहार में ही निहित है और अगर हम चाहते है कि हम इन सभी दुर्बन्धनों से मुक्त होकर एक सदाचारी और शांत सुखमय जीवन का निर्वाह करें उसके लिये यह आवश्यक है कि हमें अपना कार्य व्यवहार निरपेक्ष रखना होगा.

हां मिश्राजी. इसके साथ एक और बात मैं यह जोड़ना चाहूंगी कि जब तक लोग हम पर हंसे ताने कसे या व्यंग्य मारते हुये आलोचना करें तब तक हमें दूसरों की व्यवहारों की चिन्ता किये बिना निरंतर अपने कार्य-व्यवहारों को सुधारने की दिशा में काम करते रहना चाहिये - रमा बोली.

रमा की बातों से संतुष्ट और प्रसन्न मिश्राजी मन ही मन अब यह भी योजना बनाने लगे कि कैसे उसे या उसके जैसे पदधारित व्यक्तियों को बिना इस बात की चिन्ता किये कि उनके आस पास ऐसा कोई न कोई भीष्म पितामह भी होंगे जिन तक यह सारा संदेश पहुंचेगा ही, अपने कार्य व्यवहार को निरपेक्ष बनाने की दिशा में अभी से ही प्रयत्नशील हो जाना होगा. एक न एक दिन भीष्म पितामह को भी यह अहसास होगा ही कि अगर अब के समय में सबसे सम्मान पाना हो तो उसके लिये निरपेक्ष व्यवहार ही एक मात्र रास्ता है. अब के समय में उन बातों का कोई

मूल्य नहीं है कि आप किस वचन या सिध्दांत के तहत किसी गलत व्यक्ति का साथ दे रहे हैं या ले रहें हैं. अब तो गलत मतलब गलत होता है. आधा गलत और आधा सही नाम का कोई चीज नहीं है. इन बातों पर न केवल मैं अमल करूंगा बल्कि अपने जैसे पदधारित व्यक्ति व अपने संपर्क में आने वाले सभी भीष्म पितामह को भी इस पर अमल करने के लिये प्रेरित करूंगा और जहां जरूरत पड़ेगी वहां दूसरों से प्रेरित भी होऊगा और जो भी इन बातों पर अमल नहीं करेंगे चाहे वह मैं रहूं या कोई दूसरा फिर उसे तो दिन रात यह कहने से कोई नहीं रोक सकता कि हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं.

मिश्राजी तो बाकी बातों को मन ही मन विचार रहे थे लेकिन अंतिम वाक्य उनके मुंह से बाहर निकल ही गया जिसे सुनते ही रमा हंसते हुये बोली. यह क्या मिश्राजी. लगता है आपको इस वाक्य से इन नौ रातों में इतना मोह हो गया है कि आप इसे छोड़ना ही नहीं चाह रहे हैं. मिश्रा जी भी हंसते हुये ही बोला. नहीं रमा ऐसी बात नहीं है. तुम्हारे और मेरे बीच में जो चर्चा हो रही है उससे मेरे मन की सभी शंकाए कुशंका धीरे-धीरे समाप्त हो रही है और मुझे नही लगता कि नौवे रात की घटना सुनाने के बाद इस संबंध में मेरे मन में किसी प्रकार की आशंका रह जायेगी और यह बात मेरे मुंह से दोबारा शायद ही कभी सोते या जागते में निकले. ओ तो मैं यह सोंचकर इस वाक्य को बोल दिया था कि मेरे जैसे पदधारित जो व्यक्ति सुधार के रास्ते पर नहीं चलेंगे उन सबको यही वाक्य बार बार बोलना पड़ेगा कि हां हां हां मैं सूर्यपूत्र हूं.

जैसे ही मिश्राजी ने इस वाक्य को एक बार फिर से दोहराया वैसे ही रमा जोर से हंस पड़ी और रमा को जोर से हंसते देख मिश्राजी भी हंसते हंसते ही बोल पड़े हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं.

छठवीं रात

छठवीं रात की सपनों का उल्लेख करते हुये मिश्राजी ने कहा. रमा इस रात मैंने देखा कि जब कर्ण और दुर्योधन अपने कक्ष में बैठे हुये युध्द की स्थिति पर चर्चा कर रहे थेए उसी समय शकुनी दुःशासन के साथ दुर्योधन के कमरे में प्रविष्ट हुये. शकुनि मामा भी चर्चा में भाग लेते हुये दुर्योधन को युध्द जीतने के ऐसे ऐसे तरीके बतलाने लगे जिसे सुनकर कोई भी कह सकता था कि वह युध्द का नियम न होकर कोई छल, प्रपंच का ही भेद है. जैसे जैसे शकुनि मामा दुर्योधन को सब बतलाते जा रहे थेए वैसे-वैसे दुर्योधन के चेहरे पर ऐसा कुटिल मुस्कान बढ़ते जा रहा था, मानो वह युध्द जीत ही गया हो. दोनों की चर्चा जब समाप्त हुई तब कर्ण ने शकुनि से कहा. मामा शकुनि आपने अभी दुर्योधन से जितनी भी बात कही है मैं उन सबसे असहमत हूं. आप मेरे मित्र दुर्योधन को युध्द जीतने के लिये ऐसे तरीके बतला रहे हैं जिसे करने में कायर व्यक्ति भी सौ बार सोचेंगे, फिर मेरा मित्र दुर्योधन तो वीर पुरुष है और मुझे विश्वास है कि मेरा मित्र भी आपके युध्द जीतने के तरीकों को कभी स्वीकार नहीं करेगा.

कर्ण ऐसा बोलकर अपने मित्र दुर्योधन के तरफ विश्वास भरी नजरों से देखने लगा और जानती हो रमा तब दुर्योधन ने अपने होंठों पर कुटिल मुस्कान लाकर कर्ण को क्या जवाब दिया ? दुर्योधन ने कहा नहीं मित्र कर्ण. शकुनि मामा सही कह रहे हैं. अगर हमें युध्द जीतना है तब मामा के बतलाये रास्ते पर चलना ही होगा और आपको भी.

दुर्योधन के मुंह से ऐसी बातें सुनकर कर्ण का चेहरा उदासी के काले भंवर में घिर गया. उनके मुंह से एक शब्द भी बाहर नहीं निकला और वह वहां से उठकर अपने

कक्ष की ओर चले गये. सच कहता हूं रमा, कर्ण के चेहरे की उस भाव को देखकर मुझे गहरा दुख हुआ और आज भी हो रहा है. मिश्राजी के चुप होने पर रमा बोली - मिश्राजी आपके दुखी होने को मैं व्यर्थ का दुखी होना ही कहूंगी. लोगों का ऐसा विश्वास है कि लोग अपना भाग्य ऊपर से लिखवा कर लाते हैं और फिर कर्म के अनुसार उसमें परिवर्तन, परिवर्धन और संशोधन होता रहता है. लेकिन कर्ण के मामले में तो यह कहा जा सकता है कि उसने अपने भाग्य को स्वयं लिखा था. उसके साथ क्या हो रहा है और आगे क्या होगा, इन सब बातों के लिये वह स्वयं जिम्मेदार था. तो फिर इसमें इतना दुखी होने की क्या जरूरत है.

रमा को जवाब देते हुये मिश्राजी ने कहा - रमा मैं तुम्हारे ईशारों को समझ रहा हूं. तुम यही कहना चाहती हो न कि कर्ण के साथ ऐसा होना तो उसी दिन तय हो गया थाए जिस दिन से वह दुर्योधन का मित्र बना था. पर यहां मैं यह जानना चाह रहा हूं रमा कि अगर किसी बुरे व्यक्ति में कुछ सुधरने की संभावना रहती भी है तो वह किसी दूसरे व्यक्ति के कारण नहीं सुधर पाता. मान लो कर्ण को यह विश्वास रहा हो कि वह अपने मित्र को बुरी प्रवृत्ति से दूर कर सकता है तो उनका यह विश्वास शकुनि के निरंतर हस्तक्षेप के कारण पूरा नहीं हुआ. तब फिर इसमें कर्ण की गलती कहां रही है. वह तो हमेशा दुर्योधन को बुरे काम करने से रोकने का प्रयास ही करता था.

रमा बोली - मिश्राजी ऐसा आप समझ रहे हैं. अब आप कर्ण और दुर्योधन के बीच किसी भी घटना के संबंध में होने वाली चर्चा को याद कर यह बतलाईये कि कभी कर्ण ने बलपूर्वक, दबावपूर्वक ऐसा कहा हो कि मित्र दुर्योधन अगर आप ऐसा करेंगे तब आपको मेरा सहयोग नहीं मिल पायेगा. नहीं कहा न. कर्ण यह दिखलाने

के लिये कि उन्होंने गलत कार्यों का विरोध किया केवल औपचारिकता का निर्वहन करता था. इस प्रकार प्रयास करने और सचमुच करने में बहुत फर्क होता है. कर्ण की इसी कमजोरी का फायदा शकुनि जैसे दुष्ट लोगों ने उठाया.

रमा की बातों से मिश्राजी को धीरे धीरे यह बातें समझ आने लगी कि कैसे उसके जैसे पदधारित व्यक्ति भी अपने संकुल के जिस दुर्योधन के मित्र जाल में फंसे होते हैं उन्हें पहली नजर में तो अपनी बदनामी और आलोचना के डर से गलत काम करने या करवाने से दूर रहने हेतु समझाते हैं. वह कुछ हद तक समझने के लिये प्रवृत्त भी होता हैए लेकिन उसी समय कोई न कोई शकुनि आकर विघ्न बाधा डाल ही देते है और मामला पहले से भी ज्यादा बदतर हो जाती है. ऐसी परिस्थिति में मित्र होने के नाते वे साथ देना भी नहीं छोड़ पाते और आलोचना के पात्र बन जाते है. रमा यहां सचमुच सही कह रही है कि मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति केवल रोकने का प्रयास कर औपचारिकता निर्वहन का ही प्रदर्शन करते हैं सच में रोकते नहीं है.

मिश्राजी ने आगे बोलते हुये कहा - रमा जीवन चक्र अच्छे और बुरे के चारों ओर ही घूमते रहता है. इस संसार में ऐसा कोई भी मनुष्य नहीं है जिन्होंने कभी न कभी अच्छा काम न किया होए उसी प्रकार ऐसा भी कोई मनुष्य नहीं है, जिन्होंने कभी न कभी कोई बुरा काम न किया हो. जब सभी की नियम चक्र इन्हीं अच्छे और बुरे कामों के चारों ओर घूमती रहती है, फिर क्यों किसी की अच्छाई इतनी बड़ी बन जाती है कि लोग उसकी पूजा करने लगते हैं और क्यों किसी की बुराई इतनी बड़ी हो जाती है कि वह लोगों की नफरत और हंसी के पात्र बन जाते हैं ?

रमा समझाते हुये बोली - मिश्राजी इसमें केवल मात्रा का भेद है और कुछ नहीं. सबसे पहले आप यह समझने का प्रयास करिये कि ये अच्छाई और बुराई की अवधारणा आई कहां से. मिश्राजी मनुष्य को व्यवस्था संचालन के लिये नियमों की आवश्यकता पड़ी और नियमों का आंकलन और मूल्यांकन व्यवहार से हुआ. मनुष्यों के ऐसे व्यवहार जो व्यवस्था संचालन के लिये निर्धारित नियमों के अनुरूप थी अच्छाई की श्रेणी में रखी गई और वहीं व्यवहार जब निर्धारित नियमों के प्रतिकूल बनी तब वह बुराई की श्रेणी में. आपको कर्ण, शकुनि और दुर्योधन के व्यवहारों में जो भी बुराई नजर आई उसका आधार उनका वह व्यवहार ही है, जिनसे नियमों का उल्लंघन हुआ. इसी प्रकार आपके पदधारित व्यक्तियों को जो व्यंग्य या आलोचना का सामना करना पड़ता हैए उसका आधार आपके पदधारित व्यक्तियों का वह व्यवहार ही है, जिससे आपके विभाग के लिये निर्धारित नियमों का उल्लंघन होता है.

रमा की बातें सुनने के बाद मिश्राजी को याद आने लगा कि कैसे द्यूत शाला में होने वाले द्यूत क्रीडा के समय शकुनि ने छल कपट से पाण्डवों को हराया था, द्रोपदी को उनके कक्ष से बाल पकड़कर घसीटते हुये राजसभा में लाकर चीरहरण का प्रयास किया गया था और एक अकेले निहत्थे अभिमन्यु को सात-सात महारथियों ने मिलकर मार दिया था. इन सभी घटनाओं में कर्ण भी सम्मिलित था चाहे वह प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष और सचमुच इन कृत्यों को करने वाले सभी लोगों का व्यवहार निर्धारित नियमों के प्रतिकूल ही था. तो फिर उन्हें बुरा कहने में बुराई ही क्या ? इसी के समानांतर अपने पदधारित व्यक्तियों के कृत्यों को याद करते हुये मिश्राजी सोचने लगे कि मेरे जैसे पदधारित व्यक्तियों के व्दारा भी अपने किसी खास को अन्य पात्र व्यक्तियों पर वरीयता देते हुये आगे बढ़ाने और लाभ

दिलाने का कार्य किया जाता है और जिन लोगों के व्दारा ऐसा किया जाता है सचमुच वे निर्धारित नियमों का उल्लंघन कर बुरा कार्य करते हैं और इस स्थिति के कारण अगर वे व्यंग्य, हंसी, तिरस्कार या आलोचना का पात्र बनते हैं तो इसमें गलत कहां है.

बहुत चिंतन मनन के बाद मिश्राजी रमा से बोले - पर रमा मैं एक बात अभी भी नहीं समझ पा रहा हूं और वह यह है कि हम विज्ञान के नियमों में यह पाते हैं कि दो विपरीत चीजों में आकर्षण होता हैए जबकि समान चीजों में प्रतिकर्षण लेकिन यहां मानव व्यवहार के संदर्भ में हम पा रहे हैं कि समान चीजों में आकर्षण और विपरीत चीजों में प्रतिकर्षण हो रहा है. ऐसा क्यों ? मिश्राजी की जिज्ञासा को शांत करते हुये रमा बोली. - मिश्राजी विज्ञान के नियम या सिध्दांत आंतरिक शक्तियों से संचालित होता है जो वास्तविक शक्ति होती है और यही प्रकृति और जीवन का शाश्वत नियम है कि समान-समान में प्रतिकर्षण और समान-असमान में आकर्षण होगा. आप मानव व्यवहारों के जिस पहलू की बात कर रहे हैं जिसमें आपको यह लगता है कि समान-समान में आकर्षण और समान-असमान में प्रतिकर्षण अर्थात् बुरे व्यक्ति बुरे व्यक्ति के साथ ही जुड़ता है और अच्छे व्यक्ति अच्छे व्यक्ति के साथ. जबकि विज्ञान के नियम के अनुसार जिसे हम आंतरिक नियम कह रहे हैं होना यह चाहिये कि अच्छाई बुराई से जुड़े और बुराई अच्छाई से. पर ऐसा होते बहुधा हम देखते नहीं है और उसका कारण हमारा भ्रम है जिसे हम बाह्य शक्ति से संचालित नियम भी कह सकते हैं. जिस दिन यह मानव व्यवहार आंतरिक शक्ति से संचालित होने लगता है उस दिन इसमें भी विज्ञान के नियम और सिध्दांत लागू हो जाते हैं. इसका उदाहरण हमें कई लोगों के जीवन से मिल जाता है. जिसमें वे लोग पहले या तो बहुत अच्छे रहे हों और बहुत

बुरे बन गये हों या पहले बहुत बुरे रहे हों और फिर बहुत अच्छे हो गये हों. लेकिन इसके लिये आवश्यक है कि स्थिति और परिस्थिति दोनों आंतरिक शक्तियों के उत्पत्ति स्थल तक पहुंचे.

रमा के बाद मिश्राजी बोले - तो रमा तुम यह कहना चाह रही हो कि अगर मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति भी अपनी बुराई को छोड़कर अच्छाई से जुड़ने की इच्छा रखें, तब वे ऐसा कर सकते हैं. रमा बोली. हां मिश्राजी यह संभव है. मगर शर्त यह है कि उनकी यह इच्छा आंतरिक शक्ति से उत्पन्न हो तभी वहां भी विज्ञान के नियम लागू होंगे.

मिश्रा जी - रमा हमारा व्यवहार आंतरिक शक्तियों से कब संचालित होता है और इसके लिये हमें क्या करना चाहिये ?

रमा - मिश्राजी चाहे सजीव हो या निर्जीव सभी की अपनी एक प्रकृति होती है. जैसे शेर एक सजीव है और उसकी प्रकृति शिकार व्दारा अपना पालन पोषण करना है. उसी प्रकार लोहा एक निर्जीव है और उसकी प्रकृति कठोरपन है. इसे आप अपने पद पर लें तो आपके पद की प्रकृति समन्वय स्थापित करना है. प्रकृति से स्वभाव बनता है, जैसे शेर का स्वभाव हिंसक होना, लोहे का स्वभाव कड़ा होना और आपके पदधारित व्यक्ति का स्वभाव मिलनसार होना है. स्वभाव से गुण बनता है. जैसे शेर का गुण हिंसा, लोहे का गुण सख्ती और आपके पद का गुण बिना भेदभाव के सबके साथ समान व्यवहार करना है. आंतरिक शक्तियों से संचालित कोई भी चाहे वह सजीव हो या निर्जीव नियत व्यवहार करते रहता है तब तक यह किसी के कार्य में व्यवधान नहीं माना जाता. लेकिन कभी-कभी बाह्य शक्तियों के

प्रभाव ज्यादा होने के कारण इसमें व्यवधान आता है और वहीं अवगुण या बुराई कहलाता है. आपके जैसा पदधारित व्यक्ति भी बाह्य शक्तियों के प्रभाव से अपना गुण खो देते हैं और किसी व्यक्ति विशेष के पक्ष में काम करके बुरे लोग की पदवी पाकर व्यंग्य और तिरस्कार का पात्र बनते हैं.

रमा ने जिस तरह मिश्राजी की शंकाओं का समाधान प्रस्तुत की उससे मिश्राजी बहुत प्रसन्न हुये और मन ही मन सोंचने लगे कि एक तरफ तो आंतरिक शक्ति मूल है, शाश्वत है, लेकिन दूसरी ओर वही शक्ति बाह्य शक्तियों से प्रभावित भी हो जाती है. इसका कारण शायद यह हो कि हममें से अनेक लोग अपनी आंतरिक शक्तियों को पहचान ही नहीं पाते हो और जो व्यक्ति आंतरिक शक्तियों को पहचानता होगा वे बाह्य शक्तियों के प्रभाव से जल्दी मुक्त हो जाते होंगे. यही कारण है कि बहुत से बुरे व्यक्ति अच्छे भी बन जाते हैं और इसकी विपरीत स्थिति भी निर्मित होती है जब आंतरिक शक्तियों से संचालित लोगों के व्दारा बाह्य शक्तियों से प्रभावित होकर अपने अच्छाई त्याग कर बुराई का रास्ता पकड़ लिये गयेए जिनमें कर्ण भी एक है.

मिश्राजी को इस तरह सोचते देखकर रमा बोली - मिश्राजी इसमें इतना सोच विचार करने की जरूरत ही नहीं है. आप यह समझिये की हर मानव के स्वभाव में मूल रूप से अच्छाई है. आप केवल अपने मूल स्वभाव के अनुसार कार्य करते रहिये आप में बुराई आ ही नहीं सकती. इसके बावजूद बहुत से लोगों के व्दारा जो बुरे कार्य किये जाते हैं उसका कारण आंतरिक और बाह्य शक्तियों का खेल ही है और कुछ नहीं. अगर ऐसा नहीं होता तो लोग या तो केवल अच्छे ही होते या फिर बुरे ही. आप स्वयं और अपने जैसे पदधारित व्यक्तियों के लिये बस यही प्रयास

करिये कि अपना मूल स्वभाव किसी भी कीमत पर न छोड़ें. फिर न व्यंग्य का सामना करना पड़ेगा और न ही तिरस्कार का.

मिश्राजी - और सब कुछ करने के बाद भी अगर कोई व्यक्ति अपना स्वभाव बदलने अर्थात् मूल की ओर लौटने को तैयार न हो तब क्या होगा रमा ?

रमा - तब क्या होगा मिश्राजी. वही होगा जिससे आप पीड़ित हैं. दूसरों की पीड़ा में अपना प्रतिबिंब देखकर बड़बड़ाते हैं वैसे लोगों की संख्या बढ़ जायेगी और फिर केवल आप नहीं सब यही कहेंगे की हां हां हां हम सूर्यपुत्र हैं.

मिश्राजी रमा की बातों को सुनकर मुस्कुरा देते हैं अैर रमा भी मिश्राजी की ओर देखते हुये मुस्कराने लगती है.

सातवीं रात

मिश्राजी सातवीं रात के सपनों के बारे में बतलाता इससे पहले ही रमा बोलना शुरू की. मिश्राजी आप अभी तक अपने छः रातों के सपनों में देखे बात का उल्लेख मुझसे किया उससे मैं इस निश्कर्ष में पहुंची हूं कि आप अभी तक अपने जैसे पदधारित सभी व्यक्तियों को पीड़ित और अपमानित मानकर चल रहे हैं. साथ ही महाभारत के जिस पात्र कर्ण से आप अपने पद का तादात्म्य स्थापित करने की कोशिश में लगे हैं उसका भी एक कारण आपके व्दारा कर्ण को पीड़ित और अपमानित समझना ही है. जबकि वास्तविक रूप में यह चाहें आपकी अपने पदधारित व्यक्तियों या चाहे कर्ण के संदर्भ में हो, पहलू की एकतरफा व्याख्या ही है. जहां तक मेरे तर्को से आपकी संतुष्टि या असंतुष्टि का प्रश्न है वह इस पर निर्भर करता है कि मेरे बतलाने के दौरान और उसके बाद आपने चीजों की दोनों पहलुओं की ओर ध्यान देना कितना सीखा. छः रातों के सपनों के आधार पर मेरे और आपके बीच हुई चर्चा से इतना तो स्पष्ट हो ही गई है कि कर्ण के मामले में कर्ण और आपके जैसे पद धारित व्यक्ति के संबंध में वह व्यक्ति भी कहीं न कहीं अपने साथ होने वाले व्यंग्य, तिरस्कार और आलोचना जिसे आप अपनी शब्दों में अन्याय होना कह रहे थे के लिये खुद भी जिम्मेदार हैं. अतः अब भी और आगे भी मेरी आपसे यही प्रार्थना रहेगी की वस्तु और परिस्थिति को सही ढंग से समझने के लिये हमें संबंधित वस्तु और परिस्थिति की दोनों पहलुओं पर ध्यान देकर ही निश्कर्ष पर पहुंचना चाहिये.

मिश्राजी ने कहा - रमा मैं तुम्हारी बातों से इंकार कहां कर रहा हूं और मैं तो अपने आपको इस बात के लिये गौरवान्वित भी महसूस कर रहा हूं कि मुझे तुम्हारे

जैसी समझने वाली जीवन साथी मिली है. तुम्हारे साथ हुई चर्चा से मेरे मन में उत्पन्न होने वाला अनावश्यक विचारों का बवंडर भी धीरे-धीरे शांत हो रहा है और मुझे विश्वास है कि नौ रातों के सपने सुनाने के बाद जिसे तुम आंतरिक शक्ति का नाम दी हो वह मेरे अंदर प्रबल रूप से उत्पन्न होगी और बाह्य शक्तियां निष्प्रभावी हो जायेंगी.

मिश्राजी की बातों से प्रसन्न रमा बोली - लेकिन मिश्राजी इसके लिये अभी आपकी तीन रातों के सपने सुनना बाकी है और मैं चाहती हूं कि इसे भी आप जल्दी से सबेरा होने के पहले सुना ही डालिये.

रमा की उत्सुकता को देखकर मिश्राजी बोले - सातवीं रात को मैंने सपने में देखा कि इन्द्र, कर्ण के पास आता है और उससे उनका जन्मजात कवच और कुण्डल की मांग करता है. कर्ण यह जानते हुये भी कि वह कवच और कुण्डल उनके जीवन रक्षा के लिये कितना जरूरी था. हंसते मुस्कुराते हुये इन्द्र को दे देता है. रमा जिस व्यक्ति ने अपने जीवन की परवाह न करके अपना जीवन रक्षक वस्तु किसी अन्य को दे दिया हो वह व्यक्ति बुरा अथवा अन्यायी कैसे हो सकता है ? इन्द्र और कर्ण के बीच घटित इस घटना को देखकर मुझे अपने जैसे पदधारित व्यक्तियों की याद आने लगी क्योंकि वे भी जिनके पास कर्मठता और ईमानदारी के सिवाय कुछ नहीं होता, किसी और के कहने पर वही कर्मठता और ईमानदारी को दे देता है अर्थात् गलत काम करने पर विवश हो जाता है. ऐसे में तुम्ही बतलाओ रमा कि लोगों के व्दारा वहां कर्ण को और यहां मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति को गलत और अन्यायी कहना क्या उचित है ?

मिश्रा जी को समझाते हुये रमा बोली - मिश्राजी यद्यपि गुण और अवगुण दोनों व्यक्तिगत होते हैं तथापि प्रभाव में यह दोनों सार्वजनिक होते हैं. अर्थात् किसी व्यक्ति के गुण और अवगुण दोनों का समाज पर प्रभाव पड़ता है. इस कारण व्यक्ति के गुण और अवगुण उसका होते हुये भी उसका न होकर सबका हो जाता है और समाज व्यक्ति के इस गुण और अवगुण का मूल्यांकन इस आधार पर करता है कि वह व्यक्ति किस ओर खड़ा है. धर्म की ओर या अधर्म की ओर, सच की ओर या झूठ की ओर, न्याय की ओर या अन्याय की ओर. पर इसका यह तात्पर्य भी नहीं है कि अगर कोई गुणी अधर्म झूठ और अन्याय की ओर खड़ा है तो वह अधर्मी झूठा या अन्यायी ही हो जायेगा. उसी प्रकार अगर कोई अवगुणी, धर्म सच या न्याय की ओर खड़ा है तो वह धार्मिक, सच्चा और न्यायी हो जायेगा. ऐसा होना तभी संभव है जब वह व्यक्ति अपने मूल स्वभाव के विपरीत व्यवहार करना शुरू करेगा. मिश्राजी आपके सपने के संदर्भ में कहा जा सकता है कि कर्ण के लिये कवच और कुण्डल केवल जीवन रक्षा का एक साधन ही नहीं अपितु उसके गुण का भी प्रतीक था. लेकिन कर्ण अपने गुण के मूल स्वभाव के विपरीत अधर्म और झूठ और अन्याय के साथ खड़ा रहा इस कारण वह भी गुणी होते हुये अधर्मी और अन्यायी कहलाया. उसी प्रकार आपके जैसे पदधारित व्यक्तियों में जो कर्मठता और ईमानदारी का गुण था उसे किसी दूसरे के कहने पर सौंप देने के कारण आप लोग भी अधर्म झूठ और अन्याय के साथ खड़े नजर आये और लोगों की व्यंग्य आलोचना और तिरस्कार के पात्र बने.

रमा की स्पष्ट बातों ने मिश्राजी को आहत तो जरूर किया लेकिन अपनी पीड़ा जाहिर न करते हुये मिश्राजी बोले - तो रमा क्या तुम यह कहना चाहती हो कि कर्ण को इन्द्र की या मेरे जैसे पदधारित व्यक्तियों को अपने से बड़ों की बात नहीं

मानना चाहिये था. अगर कर्ण के व्दारा वहां इन्द्र को और मेरे जैसे पदधारित व्यक्तियों के व्दारा अपने से बड़ों को इंकार किया जाता तब हम दोनों पर एक दूसरे प्रकार का आरोप लगता और अंततः इसका परिणाम भी तिरस्कार और आलोचना ही होता. ऐसे में किसी व्यक्ति के लिये कौन सी राह पर चलना उचित होता ? रमा बोली - मिश्राजी कुछ बातें शाश्वत होती है जिनमें सच और न्याय भी है. अगर कोई व्यक्ति यह इच्छा रखता है कि उसे आने वाली पीढ़ी अन्यायी या बुरा न कहे तो उसके लिये जरूरी है कि वह हर परिस्थिति में सच और न्याय के साथ ही खड़ा रहे. जब कोई व्यक्ति अपने गुण अथवा अवगुण को केवल व्यक्तिगत बातें समझकर काम करता हैए वहीं इस प्रकार की स्थिति निर्मित होती है. व्यक्ति यह धारणा में रहता है कि उसका व्यक्तिगत गुण अथवा अवगुण ज्यादा से ज्यादा किसी एक व्यक्ति को ही प्रभावित कर सकता है और इसी सोच के साथ गलतियों की एक श्रृंखला बनती चली जाती है.

मिश्राजी - वो तो ठीक है रमा, पर मैं सोचता हूं कि मेरे जैसे पदधारित व्यक्तियों के समक्ष कर्ण से भी ज्यादा मुश्किल परिस्थिति होती है. आदेश न मानने का दबाव अच्छा कहलाने की लालसाए सांसारिक लाभ की प्रत्याशा और सबसे बड़ी बात मानव होने के नाते लोभ और राग व्देष से प्रभावित हो जाना, ऐसे कारक हैं, जो मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति को गलत काम करने की ओर ले जाता है कभी कभी इच्छा से तो कभी कभी अनिच्छा से ही सही.

इससे पहले की मिश्राजी कुछ और बोलते रमा बोली - जब तक मनुष्यों के मन में दो बलवती और विपरीत इच्छायें एक साथ उत्पन्न होगी और मनुष्य यह जानते हुये भी की उनके मन के अंदर उत्पन्न इच्छाओं में कही कोई समानता नहीं हैए

उसे पूरा करना चाहेगाए तब तब उसके समक्ष विशम परिस्थति उत्पन्न होगी ही. मिश्राजी आप कर्ण को ही ले लो. उनके मन में भी दो विपरीत इच्छायें उनके जीवन पर्यन्त साथ साथ चलती रही. एक तरफ तो वह चाहता था कि दुर्योधन के साथ उसकी मित्रता कभी न टूटे और दूसरी ओर वह यह भी चाहता था कि उसके जितने भी गुण है वह दुर्योधन के काम आये. साथ ही वह यह भी चाहता था कि लोग उसे दुर्योधन का साथ देने की बजाय उसके गुणों के कारण ज्यादा याद रखें. उसी प्रकार आप जैसे पदधारित जितने भी व्यक्ति है उनके मन में एक इच्छा तो यह होती है कि उन्हें संकुल स्तर पर सबसे श्रेश्ठ व्यक्ति का स्थान मिले और उसी के अनुरूप सम्मान भी मिलें. किन्तु इसी के विपरीत उनके मन में यह भी इच्छा होती है कि उन्हें चाहे वह उच्च स्तर का व्यक्ति होए मध्यम या समकक्षी हो कोई भी गलत न समझे. मिश्राजी इस संसार में मनुष्य व्दारा किया जाने वाला ऐसा एक भी कार्य नहीं है जिसका परिणाम केवल उसी का हो. फिर हम ऐसा क्यों सोंच लेते हैं कि हम कुछ करेंगे और कोई भी उससे प्रभावित नहीं होगा. लेकिन जब आप अच्छे काम ही करेंगे तब लोग उससे भी सकारात्मक और नकारात्मक रूप से प्रभावित होंगेए लेकिन यहां आप आलोचना और तिरस्कार के पात्र नहीं अपितु प्रशंसा के पात्र बनेंगे. इसीलिये आपके जैसे पदधारित सभी व्यक्तियों को केवल उत्तम कार्य ही करने चाहिये.

रमा की बातें सुनकर मिश्राजी बोले. रमा अभी की इन सारी चर्चाओं से इतना तो समझ गया कि मनुष्य का कार्य ही उसके मूल्यांकन का आधार होता है. हर मनुष्य अपने मूल रूप में अच्छा ही होता है और अच्छा ही करना चाहता है. ऐसा होने के बाद भी लोगों के व्दारा गलत कार्य किये जाते हैं तो उसका कारण बाह्य परिस्थितियों का प्रभाव है. अब यह हमारे ऊपर है कि उन बाह्य परिस्थितियों के

प्रभाव से अपने को कितना सुरक्षित रखते हैं. मेरी कोशिश तो यही होगी की इन बाह्य कारकों का हमारे कार्य व्यवहार पर कोई प्रभाव न पड़े और जिस मान सम्मान की लालसा हमारे मन में है उसे हम प्राप्त करें.

मिश्राजी की स्वीकारोक्ति से गदगद होती हुई रमा बोली - हां मिश्राजी कमजोर या गलत व्यक्ति ही अपने कार्यों के लिये दूसरों को जिम्मेदार ठहराते हैं. आंतरिक शक्तियों से परिपूर्ण मनुष्य अपने हर काम की जिम्मेदारी स्वयं लेते हैं. ऐसे में मानव स्वभाव के तहत जब कभी कोई गलती कर भी लेते हैं तो तुरंत उसकी जिम्मेदारी लेते हुये सुधार के रास्ते पर अग्रसर भी हो जाते हैं. लेकिन जब अपने कार्यों के लिये दूसरों को जिम्मेदार ठहराना शुरू करेंगे तब सुधार का रास्ता भी बंद हो जाता है क्योंकि वहां ऐसे लोग यह मानने लगते हैं कि गलती उनके कारण नहीं बल्कि दूसरे के कारण हुई है और ऐसे लोग ही आलोचना और तिरस्कार के पात्र बनकर उसकी पीड़ा की अनुभूति अपने मन में करने लगते हैं. मन की पीड़ा कम करने के लिये इस संसार का उस संसार के कोई ऐसा पात्र जिनका जीवन उन्हें अपने समान लगता है से अपना तादात्म्य स्थापित करना शुरू करते हैं जैसे आपने अपने मन की पीड़ा कम करने के लिये अपना संबध कर्ण से जोड़ लिया है.

रमा की बात समाप्त होने पर मुस्कुराते हुये मिश्राजी बोले - हां रमा तुम सही कह रही हो. मैं अपने को कर्ण के समान ही पीड़ित मान कर चल रहा था और उसके जीवन से तुलना कर अपनी पीड़ा कम करने की कोशिश कर रहा था. पर अब धीरे धीरे यह प्रवृत्ति कम हो जायेगी.

रमा - कौन सी प्रवृत्ति मिश्राजी ?

मिश्राजी - यही रमा अपने को इतिहास के किसी व्यक्ति के साथ जोड़ने की.

रमा - और उसका अंत कब होगा मिश्राजी ?

मिश्राजी- किसका रमा ?

रमा - अरे उसी का जिसे आप बड़बड़ाते हैं हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं.

रमा के मुंह से यह वाक्य सुनकर मिश्राजी खिखिलाकर हंस पड़ते हैं और रमा भी धीरे से मुस्कराकर मिश्राजी का साथ देती है.

आठवीं रात

आठवीं रात की बात बताते हुये मिश्राजी ने कहा. रमा उस रात को तो मेरे साथ और गजब की घटना घटी. मैंने देखा कि मेरे पास स्वयं विदुर जी आये और आकर बोलने लगे बेटा. तुम क्यों इन प्रपंचों में उलझे हुये हो. आखिर तुम्हें मिल क्या रहा है. मैंने तो तुम्हारे जैसे पदधारित हर व्यक्ति के मुंह से आज तक यही सुना है कि उन्हें कार्य करने में कितना ज्यादा तकलीफ मिल रहा है. कोई कहता है जो उनका स्तर है उससे छोटे स्तर का काम उनसे लिया जाता है. कभी कभी तो चपरासी क्या मजदूरों के जैसा भी काम करना पड़ता है. कोई कहता है कि उन्हें लोगों के व्दारा दलाल, चमचा, पिछलग्गू और चुगली करने वाला भी कहा जाता है. एक के मुंह से तो मैंने यहां तक सुना है कि लोगों मे यह धारणा बन गई है कि जिन्हें कुछ काम नही करना है वो तुम्हारे जैसे पद धारण कर लें. बेटा मैं जानता हूं कि लोगों ने तुम्हारे जैसे पदधारित व्यक्तियों के बारे मे जो कुछ भी कहा है वह सरासर गलत है और इसमें सच्चाई लेशमात्र भी नहीं है. पर बेटा लोगों की धारणा को बदलने में समय लगता है. जितने समय में उनकी अवधारणा बदलेगी, उतने समय में तो तुम्हारा एक दो जन्म और हो जायेगा. इस कारण मेरा कहना मान और अपना संपूर्ण ध्यान अपने घर परिवार, सगे संबंधी और इष्ट मित्रों पर लगाए जो सदैव तुम्हारे साथ पाने की लालसा करते रहते हैं. अगर इसके बाद भी अकल ठिकाने पर नहीं आया तो न घर का रहेगा न घाट का. यह सब मैं तुम्हारे जेसे पदधारित व्यक्तियों के जीवन को सीधा सीधा देखने के बाद अपने अनुभव से कह रहा हूं. अतः इस मायाजाल को तोड़ और आजाद हो जा. मैं तो खुद अब हस्तिनापुर को छोड़कर जंगल की ओर प्रभु की शरण में जा रहा हूं. शायद वहीं मुझे शांति मिले. रमा विदुर जी ने मुझसे ऐसा कहकर सचमुच जंगल की ओर

चला गया. मिश्रा जी ने आगे कहा. रमा मुझे विदुर जी की बात बहुत अच्छी लगी और लगता भी क्यों नहीं ? विदुर जी पहुंचे हुये महात्मा और विव्दान व्यक्ति थे. उनकी बातों का सम्मान तो स्वयं भगवान श्रीकृष्ण और पितामह भीष्म भी करते थे. पर रमा मेरी एक बात समझ नहीं आई कि इसके पहले मैं सपने में जो कुछ देखता था वह कर्ण के साथ घटित होता था. यह पहला सपना था जिसमें कर्ण के स्थान पर मैं स्वयं था. ऐसा क्यों रमा ?

मिश्राजी की सभी बातों को गंभीरता से सुनती हुई रमा मिश्राजी के पूछने पर बोली. मिश्राजी इसके पहले के सभी सपनों में कर्ण के होने का कारण यह था कि आपके जैसे पदधारित सभी व्यक्तियों जिनके की आप यहां प्रतीक है, के अवचेतन मन में अपने को कर्ण जैसा समझने की धारणा रही है. आपके पद वाले सभी व्यक्ति अपनी तुलना या अपना प्रतिबिंब कर्ण में ढूंढने का प्रयास करते थे और उनकी सोच का कारण उनके मन का यह भाव है कि जिस प्रकार सर्वगुण संपन्न होने के बावजूद केवल दुर्योधन के पक्ष में खड़ा रहने के कारण कर्ण को उचित स्थान व सम्मान नहीं मिल सकाए उसी प्रकार आपके जैसे पदधारित व्यक्तियों को जो सर्वगुण संपन्न है उन्हें भी केवल इस कारण मान व सम्मान नहीं मिलता कि इस पद के संबंध में लोगों में नकारात्मक धारणा बन गई है.

इतना बोलने के बाद रमा कुछ पल के लिये रुककर मिश्राजी के चेहरे की तरफ यह सोंच कर देखी कि शायद मिश्राजी कुछ और पूछे. पर मिश्राजी को चुपचाप शांत भाव से सुनते देखकर रमा आगे बोली और मिश्राजी आठवे रात की सपने में आपने कर्ण के स्थान पर जो स्वयं अपने आपको देखा जिसे महात्मा विदुर जी समझा रहे हैं उसका कारण आपके चेतन और अवचेतन मन के बीच का संर्घष है.

जैसे ही रमा ने चेतन और अवचेतन मन जैसे शब्दों का प्रयोग की तुरंत मिश्राजी ने पूछा. रमा तुम इस चेतन और अवचेतन मन की अवधारणा से क्या यह समझाना चाह रही हो कि एक ही व्यक्ति में एक ही वस्तु या घटना के संबंध में दो धारणा होती है. एक धारणा वह जिससे प्रेरित होकर वह काम करता है और दूसरी धारणा वह जो उसके अवचेतन मन में गुप्तावस्था में रहता है. और कभी कभी तो ऐसा भी होता है कि मनुष्य की पूरी उम्र निकल जाती है पर उसकी अवचेतन मन की धारणा भौतिक धरातल पर नहीं आ पाती.

मिश्राजी की बातों सें पूर्ण सहमति दिखाते हुये रमा बोली - हां मिश्राजी मैं भी बिल्कुल यही कहना चाह रही थी. जैसे आप के पदधारित बहुत से व्यक्ति उस काम को किये जा रहे हैं जो उनके चेतन मन से संचालित हो रहा है. पर उन्हीं में से कुछ ऐसे भी हैं जिनका मन कभी कभी उनसे कहता होगा कि अरे छोड़ो इस भागम भाग के काम में क्या सुख और शांति है. पर यह बात इतनी निर्बल अवस्था में उनके मन में आता है कि कुछ पल बाद ही उसका नामोनिशान तक नही रहता. आपने अपने सपने में जिस विदुर की बात बतलाई है या जो विदुर के रूप में आपको समझा रहे थे दरअसल वह विदुर नहीं बल्कि आपका अवचेतन मन था. और मिश्राजी अवचेतन मन की बात जिन लोगों ने सुन लिया या जिन्हें सुनाई दे दिया समझो उनके जीवन से दुख दर्द का अंत हो गया क्योंकि अवचेतन मन की आवाज कोई साधारण और हर किसी को सुनाई देने वाला आवाज नहीं होता बल्कि सच्चा और ईश्वरी आवाज होता है. आपकी भी अवचेतन मन कहीं न कहीं आये दिन की व्यंग्य आलोचना और तिरस्कार से आहत हुई और उसी की अभिव्यक्ति आपके सामने में हुई.

जैसे ही रमा बोलकर रूकी मिश्राजी तुरंत बोल पड़े. रमा अभी तक तुमने जो भी बात कही उसमें पूर्ण रूप से सच्चाई है. पर इसके संबंध में अपना विचार और बतलाओ कि सपने के अंत में मुझसे विदुर जी ने क्यों कहा कि अब मैं भी हस्तिनापुर को छोड़कर जंगल की ओर जा रहा हूं और शायद वहीं मुझे प्रभु की आस्था में शांति मिल सके.

मिश्राजी को जवाब देते हुये रमा बोली - मिश्राजी जैसा कि मैंने अभी कुछ देर पहले कही कि अवचेतन मन की आवाज हर कोई सुन ले ऐसा संभव नहीं होता, पर यह भी सही है कि अवचेतन मन अपनी बात सुनाने का प्रयास जरूर करता है और उसके बार बार के प्रयासों के बाद भी जब कोई अवचेतन मन की बात सुनना न चाहे अपने ही मायाजाल छल कपट में उलझा रहे तब वह उस व्यक्ति को सदा के लिये छोड़कर चला जाता है. कहने का तात्पर्य यह है कि फिर अवचेतन मन में इस प्रकार की बातें कभी जागृत नहीं हो पाती. वह सदा के लिये सुसुप्ता अवस्था में ही रह जाती है. विदुर रूपी अवचेतन मन की आवाज जिसने आपसे यह कहा कि मैं तो अब जंगल की ओर चला इसका अभिप्राय यह है कि तुम भी अपने माया जाल को छोड़ दे तभी शांति और ईश्वर स्वरूप सम्मान मिलेगा.

रमा की बातों को सुनकर मिश्राजी सोचने लगे कि सचमुच महात्मा विदुर ने उस समय के उन सभी प्रमुख पात्रों के सम्मुख अपनी बात रखी थी जो अधर्म और अन्याय की ओर खड़े हुये थे. उन पात्रों में कर्ण भी था. पर सभी ने महात्मा विदुर की बातों को सुनकर अंत में यही जवाब दिया था कि उन सबकी अपनी अपनी विवशता है और वे लोग दुर्योधन और हस्तिनानुर को छोड़कर नहीं जा सकते. अंत में महात्मा विदुर ही दुर्योधन और हस्तिनापुर को छोड़कर चले जाते हैं. इस बात से

दो निश्कर्ष निकलता है. प्रथम विदुर रूपी अवचेतन मन सबको यह जरूर बतलाता है कि उनके लिये क्या अच्छा और क्या बुरा है. दूसरा विदुर रूपी अवचेतन मन की बातों पर ध्यान नहीं देने से यह पुनः अवसर प्रदान नही करता और फिर उसके बाद जो कुछ होता है वह नुकसानदायक ही साबित होता है. जैसे महाभारत के युध्द में सभी गुणी महारथियों का मारा जाना और मेरे जैसे पदधारित व्यक्तियों का व्यंग्य और तिरस्कार का सामना करना अवचेतन मन की आवाज को अनसुना करने का ही परिणाम है. पर इसी के साथ यह बात भी उत्पन्न होती है कि ठीक है विदुर रूपी अवचेतन मन की बातों को कर्णए भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य तथा मेरे जैसे पदधारित व्यक्तियों में से कुछ सुनकर अन्याय का साथ छोड़ देते तो क्या इतने में ही महाभारत का युध्द और यहां मेरे जैसे पदधारित व्यक्तियों का तिरस्कार रूक जाता. बिल्कुल नहीं. क्योंकि मेरा मानना यह है कि जब तक अन्यायी अपने अवचेतन मन की आवाज सुनकर स्वयं न्याय के साथ न आ जाये तब तक स्थिति और परिस्थिति में सकारात्मक परिवर्तन की बात सोचना भी उचित नहीं होगा. जैसे महाभारत में जब दुर्योधन ही अपने अवचेतन मन की बात सुनता तभी विनाश रुक सकता था. उसी प्रकार जब मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति से गलत काम कराने वाला अपने अवचेतन मन की बात सुनेगा, तभी इस पदधारित व्यक्तियों का तिरस्कार रूकेगा अन्यथा नहीं.

मिश्राजी को सोच में डूबे देखकर रमा बोली - मिश्राजी आप इतनी देर से क्या सोच रहे है इसका मुझे हल्का सा आभास है और वह यह है कि एक दो लोगों के व्दारा अवचेतन मन की आवाज सुनकर सत्यपथ पर चलने से क्या पूरी व्यवस्था बदल सकती है आप यही सोंच रहे हैं न मिश्राजी ?

रमा के अनुमान पर हामी भरते हुये मिश्राजी ने पूछा रमा यह सब तुम कैसे जान गई ? क्या यह सब मेरे चेहरे में लिखा हुआ है या फिर तुमने अभी अभी मन के भावों को पढ़ने की कोई हुनर सीख ली है ? रमा बोली. यह तो एक सामान्य मनोविज्ञान है मिश्राजी. प्रायः यह देखने में आता है कि जब भी कोई बड़ा अच्छा काम करने की बारी आती है तो सर्वप्रथम मन में यही भाव आता है कि यह पूरा होगा कि नहीं और पूरा होगा तो कौन पूरा करेगा. पर किसी के व्दारा यह नहीं सोचने का प्रयास किया जाता कि यह अच्छा और बड़ा काम अवश्य पूरा होगा और इसे मैं पूरा करूंगा. अब आप महाभारत के पात्रों को ही ले लो. जब दुर्योधन का साथ छोड़ने की बात आती थीए तब सबसे पहले मन में यही आता था कि यह तो संभव ही नहीं है और अगर संभव हो भी जाये तो इसकी शुरूआत कौन करेगा. उसी प्रकार आपके पदधारित व्यक्ति भी यही सोंचते हैं कि उनके एक के बदलने से क्या होगा और इस प्रकार स्थिति ज्यों की त्यों बनी रहती है.

रमा की बातों में अपनी बात मिलाते हुये मिश्राजी बोले - हां रमा बिल्कुल यही होता है. इसके अतिरिक्त मन में एक बात और आती है और वह यह है कि बीच में किसी का साथ छोड़ देना क्या कायरता नहीं कही जायेगी और शायद इसी से बचने के लिये ही कर्ण व्दारा न तो दुर्योधन का साथ छोड़ा गया और न मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति अपने पद को छोड़ पा रहे हैं.

रमा बोली - मिश्राजी आपके व्दारा दिया गया तर्क हर प्रकार से अपने को अपनी परिस्थिति को, अपने निर्णय को सही ठहराने की कोशिश भर है और ऐसा करने से न तो उस युग में कर्ण का भला हुआ और न इस युग में आपके जैसे पदधारित

व्यक्तियों की ही भला होगी. और अगर किसी भी युग में किसी का भला हुआ है तो वह सत्य और न्याय के मार्ग पर चलने से ही हुआ है और होगा.

मिश्रा जी बोले - हां रमा अब मैं समझ गया कि इंसानों से गलती कब होती है.

रमा बोली - कब होती है मिश्राजी ?

मिश्राजी - जब उनके व्दारा अपने अवचेतन मन की बातों को सुनकर भी अनसुना कर दिया जाता है.

रमा - हां मिश्राजी. और ऐसे ही लोगों के व्दारा फिर अपने को सही साबित करने के लिये वही तर्क दिया जाता है जो अभी थोड़ी देर पहले आप दे रहे थे.

मिश्राजी - मैं! कौन सा तर्क दे रहा था रमा ?

रमा - वही मिश्राजी कायरता वाली तर्क.

मिश्राजी - वो मेरा तर्क नहीं रमा मन में उत्पन्न एक विचार था जिसे मैंने तुमसे कह दिया.

रमा - नहीं मिश्राजी. यही विचार ही आगे चलकर तर्क के घेरे में अपने को घेरते चला जाता है और विचार करने वाला फिर मुक्त नहीं हो पाता है.

मिश्राजी - ठीक है रमा. फिर मैं इस विषय पर विचार भी नहीं करूंगा.

रमा - हां मिश्राजी यही उचित होगा. जैसे ही कोई व्यक्ति अपने अवचेतन मन की आवाज सुन लेता है उसके बाद फिर उसे किसी और अन्य विचार से अपने को बांधने का प्रयास नहीं करना चाहिये. अन्यथा.....

इससे पहले की रमा आगे कुछ और बोल पाती मिश्राजी उसके अंतिम शब्दों को लेते हुये बोला. अन्यथा क्या रमा ?

रमा - अन्यथा उसे बार बार बड़बड़ाते हुये यही कहना पड़ेगा जो आप कह रहे थे.

मिश्राजी - रमा तुम्हारा अभिप्राय कही हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं से तो नहीं है.

रमा - बिल्कुल मिश्राजी. जो व्यक्ति अपने अवचेतन मन की नहीं सुनता वही व्यक्ति अपनी सुविधानुरूप पात्रों में अपना प्रतिबिंब देखता है जैसे आपने कर्ण में देखा और बार बार बोलने लगे. हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हुं.

इसी की साथ दोनों के होठों पर एक हल्की सी मुस्कान उभर आई.

नौंवी रात

नौंवी और अंतिम रात की सपनों का विवरण देते हुये मिश्राजी ने कहा - रमा आज की रात मैंने देखा कि स्वयं भगवान जनार्दन कर्ण के पास आकर बोले - हे कर्ण अब भी समय हाथ से नहीं निकला है. पाण्डवों के पक्ष में चला जा और युध्द के उपरांत ज्येष्ठ भ्राता होने के नाते निष्कंटक हस्तिनापुर के राज सिंहासन पर बैठकर राज कर. भगवान जनार्दन के ऐसा बोलने पर जानती हो रमा कर्ण ने क्या बोला ? कर्ण ने बोला कि हे प्रभु अन्याय और अधर्म के मार्ग पर आगे बढ़ता यह सूर्यपुत्र आज मार्ग के उस अंतिम छोर पर पहुंच गया है जहां से वापसी नही हो सकती. फिर इस अन्याय और अधर्म के मार्ग पर चलते चलते मेरे समक्ष ही जिसमें मैं भी सम्मिलित रहा हूंए पाण्डवों के साथ क्या क्या अधर्म और अन्याय नही हुआ. मेरे सामने ही लाक्षागृह हुआए बारह वर्ष का वनवास और एक वर्ष अज्ञातवास, द्यूत क्रीडा, द्रौपदी चीरहरण और अभिमन्यु की हत्या हुई. प्रभु मेरे इन अपराधों के लिये पाण्डव यह जानकर कि मैं उनका ज्येष्ठ भ्राता हूं मुझे माफ भी कर दे और कदाचित मेरे अपराधों को मन से भुला भी दें, फिर भी मैं इस अपराधों के लिये अपने आप को न तो कभी माफ कर सकता हूं और न ही भुला सकता हूं. ऐसे में प्रभु मैं सब कुछ जानते हुये भी यही चाहूंगा कि मुझे मेरे इस अपराध के लिये सजा मिले और वही मेरी प्रायश्चित होगी.

मिश्राजी ने आगे बोलते हुये कहा. रमा बिल्कुल उसी तरह मेरे जैसे पदधारित व्यक्तियों से भी चाहे दबाव में हो या स्वेच्छा से हो अनेक अधर्म और अन्याय हुये हैं. ऐसे में मेरे जैसे पदधारित कोई भी व्यक्ति भी यह नहीं चाहेगा कि बिना सजा पाये या प्रायश्चित किये अपने पद के काम को छोड़कर दूसरा काम करना आरंभ

कर दे. मिश्रा जी की पूरी बातें सुनने के बाद रमा बोली. मिश्राजी माना कि उस युग में कर्ण ने अपने व्दारा किये गये अधर्म और अन्याय के लिये प्रायश्चित के रूप में मृत्यु का रास्ता चुन लिया था. पर आपके अनुसार आपके जैसे पदधारित व्यक्तियों के लिये प्रायश्चित करने का रास्ता कौन सा उचित हो सकता है या आप स्वयं किस ढंग से प्रायश्चित करना चाहेंगे.

इस पर मिश्राजी ने बिना विलंब किये बोलना शुरू किया. रमा इन नौ रातों में मैंने जो कुछ देखा और तुमसे गहन चर्चा के बादा जो कुछ मैंने सीखा उस पर मैं निश्चित रूप से अमल करूंगा और हो सकता है इसी से मेरा प्रायश्चित भी हो जाये. रमा बोली - हां मिश्राजी. आपने यह सही सोचा है. जीवन की घटनाओं से अगर सबक लेकर इंसान आगे बढ़े तो मैं यह तो नहीं कहती की उन्हें किसी भी प्रकार की दुख तकलीफ या अपमान का सामना करना नहीं पड़ेगा लेकिन इतना जरूर कह सकती हूं कि इन बातों की संभावना बहुत कम हो जायेगी. और मुझे यह सुनकर भी प्रसन्नता हुई कि आप प्रायश्चित करने के लिये मन से और स्वस्फूर्त रूप से तैयार हैं.

मिश्राजी - हां रमा. कई लोग प्रायश्चित को बहुत ही नकारात्मक भाव से लेते हैं. प्रायश्चित शब्द सुनकर ही बहुतों के दिमाग में यह बात आती है कि जरूर प्रायश्चित करने वाला व्यक्ति ने अपने जीवन में ऐसा कोई काम किया है जो सरलता से क्षमा करने योग्य नहीं है. जबकि मैं मानता हूं कि प्रायश्चित एक सकारात्मक भाव हैए जिसका अर्थ अपनी भूलों को सुधारने का प्रयास करते हुये सदाचार के मार्ग पर आगे बढ़ना हैं.

रमा बोली - हां मिश्राजी. आप बिल्कुल सहीं कह रहे हैं. प्रायश्चित का अर्थ पूर्व में की गई गलतियों की पुनरावृत्ति नहीं करते हुये सही राह पर चलना ही होता है. हमारे धर्म ग्रंथ और इतिहास ऐसे महापुरुषों की किस्से और कहानियों से भरे पड़े हैं जिन्होंने अपनी छोटी सी भी गलती का अहसास होने पर तुरंत प्रायश्चित करने का संकल्प किया और प्रायश्चित करने से न केवल वह व्यक्ति अपने बुरे कार्यों से निवृत्त होता है बल्कि मन और आत्मा के शुध्द हो जाने से आगे फिर ऐसी परिस्थिति उत्पन्न होने की संभावना ही खत्म हो जाती है. इस प्रकार हम प्रायश्चित को मन और आत्मा की शुध्दिकरण कह सकते हैं.

मिश्राजी - हां रमा और अब मैं तुरंत इस शुध्दिकरण के लिये तैयार हूं.

रमा - पर मिश्राजी आप शुध्दिकरण के लिये करेंगे क्या ?

मिश्राजी - रमा अभी तो मैंने तुम्हें बतलाया न कि इन नौ दिनों की घटना और उसके फलस्वरूप सीखे सबक ही मेरे शुध्दिकरण का आधार होगा.

रमा - मिश्राजी वो तो मैं जानती हूं फिर भी आप इसे थोड़ा विस्तार से बतलाईये. इससे दो फायदे होंगे. प्रथम आपको यह स्मरण रहेगा कि आपने इसके संबंध में अकेले में नहीं अपितु किसी के समक्ष फैसला लिया है और यह बात आपके लिये एक तरह से शपथ लेने जैसा होगा और दूसरा यह कि मान लो भविष्य में कभी और किसी कारण से इस मार्ग से विचलित होते हुये नजर आयेंगे तब मैं आपको याद दिला दिया करूंगी.

रमा की बुध्दिमत्ता पूर्ण बातों को सुनकर मिश्राजी बोले - तो सुनो रमा पहली बात तो यह कि न केवल मैं बल्कि मेरे जैसे पदधारित सभी व्यक्ति सही अधिकारी के

नियुक्ति पत्र से ही यह कार्य करेंगे. व्दितीय - जब भी जहां भी और जैसे भी पढ़ने लिखने का अवसर मिलेगा हम सभी पढ़ेंगे लिखेंगे. अगर अवसर न भी मिला तब भी अवसर ढूंढने का प्रयास करेंगे. तृतीय - किसी के अहसान चुकाने के लिये कभी गलत काम नहीं करेंगे. चतुर्थ - किसी को भी प्रतिस्पर्धी नही, बल्कि सभी को सहयोगी मानेंगे, पंचम - अपना व्यवहार निरपेक्ष रखेंगे, छठवां - आंतरिक शक्ति से संचालित नियमों का पालन करेंगे, सातवां - अपनी प्रकृति को समझते हुये स्वभाव और गुणों पर दृढ़ता से खड़े रहेंगे, आठवां - अवचेतन मन के आवाज की कभी उपेक्षा नहीं करेंगे और नौंवा - जहां कही भी आभास होगा सहर्ष प्रायश्चित करेंगे.

मिश्राजी की शपथ समान बातों से गदगद रमा बोली. हां मिश्रा जी आपका निश्चय बहुत ही सुंदर है. अगर आपके जैसे ही पदधारित सभी व्यक्तियों का निश्चय हो जाये तब वह दिन दूर नहीं जब आपके पदका सार्वभौमिक रूप से मान न बढ़ें. आज के समय में आपके जैसे पदधारित व्यक्तियों को जो अपनी उपेक्षा और अपमान की बातें नजर आती हैं उसका कारण कहीं न कहीं आप लोग ही रहे हैं और इन सभी बातों का परिणाम यह हो रहा था कि आप लोग स्वयं अपनी उपेक्षा और अपमान कर रहे थे.

रमा की बात अभी पूरी नहीं हुई थी कि उनके जवाब पर प्रति प्रश्न करते हुये मिश्राजी बोले - रमा अभी अभी तुम बोली कि मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति स्वयं अपनी उपेक्षा और अपमान कर रहे थे. भला यह क्या बात हुई. जिसकी उपेक्षा और अपमान सब कोई करे वह भला अपना ही उपेक्षा और अपमान कैसे कर सकता है. रमा क्या तुम कुछ ज्यादा नहीं बोल रही हो ?

रमा बोली - बिल्कुल नहीं मिश्राजी. अरे यथास्थितिवाद की मानसिकता में जीना भी तो एक तरह से अपनी उपेक्षा और अपमान करने के समान ही होता है. रातों में बड़बड़ाने से पहले क्या आपने कभी उस स्थिति को बदलने का प्रयास किया था या बदलने के लिये कभी सोंचकर देखा थाए जिससे आपके जैसे पदधारित व्यक्ति जूझ रहे थे और अपने को उपेक्षित और अपमानित समझ रहे थे. नहीं न. तो आखिर परिस्थिति को स्वीकार करके कष्ट दुख और अपमान में जीते रहना अपनी उपेक्षा और अपमान स्वयं करना हुआ कि नहीं. मिश्राजी रमा की बातें सुनने के बाद इतना तो समझ गया कि अभी रमा से पूछते समय उनसे गलती हुआ था. वह सचमुच इस बात को नहीं समझ पाया था कि उनके जैसे पदधारित व्यक्तियों के व्दारा ही उनके स्वयं की उपेक्षा और अपमान हो रही थी. अपनी गलती स्वीकार कर मिश्राजी बोले. कहना आसान होता है रमा. ऐसा नहीं है कि स्वयं की उपेक्षा और अपमान का अहसास मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति में से किसी को नहीं हुआ होगा. हुआ होगा जरूर. पर तंत्र की व्यवस्था ही ऐसा है कि सब कुछ जानकर भी इसके प्रति उदासीन रहना पड़ता है.

रमा बोली - यही तो वह विचार है मिश्राजी जिसके कारण आपके जैसे पदधारित व्यक्तियों को अपने से ऊंचे स्तर के लोगों की अनर्गल बातों को भी मानना पड़ता है. उनके व्दारा यह सोचा जाता है कि काम चाहे उचित हो या अनुचित चाहे उससे उनका मान सम्मान ही प्रभावित क्यों न होता हो जब ये लोग सब कामों को बिना ना नुकुर के कर देते हैं तब हमें काम कराने में हर्ज ही क्या होना चाहिये. फिर जो कुछ भी होना है इनके साथ होना है. और आप लोग भी चाहे जितनी भी पीड़ा या अपमान क्यों न हो करते ही हो. यह सब तभी रूक सकता है जब आप अपने उपेक्षा और अपमान के प्रति सजग हो जाओगे.

मिश्राजी - हां रमा. स्व उपेक्षा और अपमान का मैं जितना भुक्तभोगी हूं शायद ही उतना और कोई होगा. अभी तक इन सारी बातों को मैं यह सोचकर बर्दाश्त करता रहा कि चलो देर सबेर उन लोगों को भी लगेगा कि उनके व्दारा मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति से गलत काम अर्थात् ऐसा काम जिससे हमारी बदनामी हो, नहीं कराना चाहिये. पर अब ऐसा लगता है कि यह सोचना ही मूर्खता है, क्योंकि बिना प्रतिरोध किये शायद ही किसी को अक्ल आये.

रमा - हां मिश्राजी प्रतिरोध तो करना ही चाहिये. लेकिन ऐसा करते समय हमें यह भी ध्यान रखना चाहिये कि हमारा प्रतिरोध विरोध में न बदल जाये.

मिश्राजी - हां रमा प्रतिरोध वैचारिक ही होता है और इसे विचारों तक ही सीमित भी रखना चाहिये.

रमा - मिश्राजी तो क्या मैं यह तय मानू कि आपके जैसे पदधारित सभी व्यक्ति वैचारिक प्रतिरोध के लिये तैयार हैं.

मिश्राजी - हां रमा. इसमें तो अब मुझे तनिक भी संदेह नहीं है. जहां कहीं भी मेरे जैसे पदधारित व्यक्ति को यह आभास होगा कि अधिकृत या अनाधिकृत सत्ता व्दारा हमारे पद की उपेक्षा और अपमान हो रही है हमारा वैचारिक प्रतिरोध उसी क्षण से आरंभ हो जायेगी.

रमा - और मिश्राजी इसके लिये पहल आपको ही करना होगा क्योंकि आपके ही अवचेतन मन में उपेक्षा और अपमान की टीस इतनी ज्यादा थी की आपको कर्ण में अपना प्रतिबिंब दिखाई देने लगा. हो सकता है आपके ही जैसे कुछ और लोग हों. लेकिन उनके मामलों का प्रकटीकरण अभी नहीं हुआ है इसलिये आप ही इसकी अगुवाई करेंगे.

मिश्रा जी - रमा यह तो मेरा सौभाग्य होगा कि इतने पुनीत और महत्वपूर्ण कार्यों की अगुवाई मेरे व्दारा होगा.

रमा - मिश्राजी आप यह सब अपने मन से स्व.स्फूर्त होकर कह रहे हैं न. कही कोई दबाव से थोड़ी अगुवाई करने के लिये तैयार हो गये.

मिश्राजी - नहीं रमा. ऐसा बिल्कुल भी नहीं है. आखिर दबाव से काम करना भी तो एक प्रकार से गलत रास्ते पर चलने के समान ही है. जिस गलत रास्ते पर चल कर मेरी यह दुर्दशा हुई थी और जिससे मुझे बहुत मानसिक पीड़ा सहने के उपरांत मुक्ति मिल रही है, उसी रास्ते पर दोबारा जाना. ऐसा मैं सोच भी नहीं सकता.

रमा - तो मिश्राजी अब मैं सौ प्रतिशत यह मान लूं कि आप कर्णमेनिया से मुक्त हो गये ?

मिश्राजी - अब यह कर्ण मेनिया क्या है रमा ?

रमा - किसी भी चीज की अधिकता जिसका हमारे तन और मन पर नकारात्मक प्रभाव पड़े वह मेनिया कहलाता है. चूंकि आप अपने हर एक कार्य और उसके परिणाम में कर्ण का प्रतिबिंब देखते थे, इस कारण आपकी दशा का संकेत करने के लिये मैंने इसे कर्णमेनिया कह दिया.

मिश्राजी हंसकर बोले - हां रमा अब मुझे स्वंय यह भरोसा हो गया है कि मैं कर्णमेनिया से मुक्त हो गया हूं.

रमा भी हंसकर बोली - हां मिश्राजी वो तो आज रात पता चल जायेगा.

मिश्रा जी - वो कैसे रमा ?

रमा - वो ऐसे मिश्राजी कि आज के बाद आप शायद ही बड़बड़ायें. हां हां हां मैं सूर्यपुत्र हूं.

उपसंहार

मिश्राजी और रमा के बीच की चर्चा समाप्त होते होते सुबह होने की आहट सुनाई दे रही थी. बाहर वातावरण में हल्की ठंडी-ठंडी वायु चिड़ियों की चहचहाहट के साथ और भी ज्यादा सुखद लग रही थी. मिश्राजी की बात समाप्त होने पर रमा बोली - मिश्राजी दिन के बाद रात का होना और रात के बाद दिन का होना महज एक भौगोलिक या खगोलीय घटना ही नहीं है. यह अपने आप में एक संपूर्ण जीवन दर्शन है. इस संसार में जन्म लेने वाले हर इंसान चाहे वह राजा हो या रंक, को अपने जीवन पथ पर कोई न कोई पीड़ा या दुख तकलीफ मिलता ही है. और ऐसा भी नहीं है कि इसकी निरंतरता बनी रहती है. तीव्रता में कम ज्यादा होकर यह खंडित भी होते रहता है. बस हमें इन सारी घटनाओं को धीरज और शांति के साथ देखते रहना चाहिये. दुख और तकलीफ की काली घटायें छंटती है और आती है एक नई उजाला.

मिश्राजी बोले - हां रमा हमारे सृष्टि के कण कण में दर्शन छिपा हुआ है और जरूरत केवल इसे महसूस करने की है. जो इंसान सृष्टि में समाहित जीवन दर्शन को पहचान लेता है वह कभी निराशा के भंवर मे फंस ही नहीं सकता. यह हमें पल पल परिश्रम करते हुये सत पथ पर चलने की प्रेरणा देता है और जो सतपथ पर चलने लगे उसे भला कैसी पीड़ा और कैसा तकलीफ.

मिश्राजी ने जैसे ही बोलना बंद किया रमा बोली - अच्छा मिश्राजी हम दोनो के बीच वार्तालाप तो निरंतर चलती ही रहेगी पर इसके लिये हमें अपने अपने नित्य कार्यों को बाधित नहीं करना चाहिये. देखो सूरज भी निकल चुका है. जो हमें संकेत

दे रहा है कि मैं तो अपने सफर पर निकल पड़ा आप लोगों को किस बात की इंतजार और है.

मिश्राजी बाहर आंगन में निकलकर सूरज की ओर देखते हुये कहा हां रमा, आज का सूरज को देखकर पता नहीं क्यों मुझे कुछ नया सा अहसास हो रहा है. ऐसा लग रहा है कि जैसे आज का सूरज केवल मेरे लिये ही आसमान पर निकला हुआ है. जो मुझसे कह रहा है कि मिश्राजी मुझे देखों मैं कल भी ऐसा थाए आज भी ऐसा हूं और कल भी ऐसा ही रहूंगा. फिर तुम में क्षणे तुष्टा क्षणे रुष्टा की प्रवृत्ति कहां से आई ?

इतना कहकर मिश्रा जी एकाएक चुप होकर रमा की चेहरे की ओर देखने लगे. रमा भी मिश्राजी की ओर देखकर कुछ बोली नहीं, केवल हल्की सी मुस्कुरा दी. रमा की इस मुस्कुराहट में पता नही क्या बात थी कि मिश्रा जी खुशी से उछल पड़े और चिल्लाकर बोले. हां रमा अब मैं केवल और केवल मिश्राजी हूं.

.....